श्री गणेशाय नमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

सप्तम सोपान

उत्तरकाण्ड

श्लोक

केकीकण्ठाभनीलं सुरवरविलसद्विप्रपादाब्जचिह्नं
शोभाढ्यं पीतवस्त्रं सरसिजनयनं सर्वदा सुप्रसन्नम्।
पाणौ नाराचचापं कपिनिकरयुतं बन्धुना सेव्यमानं
नौमीड्यं जानकीशं रघुवरमनिशं पुष्पकारूढरामम्॥ १॥

कोसलेन्द्रपदकञ्जमञ्जुलौ कोमलावजमहेशवन्दितौ।
जानकीकरसरोजलालितौ चिन्तकस्य मनभृङ्गसङ्गिनौ॥ २॥

कुन्दइन्दुदरगौरसुन्दरं अम्बिकापतिमभीष्टसिद्धिदम्।
कारुणीककलकञ्जलोचनं नौमि शंकरमनंगमोचनम्॥ ३॥

दो. रहा एक दिन अवधि कर अति आरत पुर लोग।
जहँ तहँ सोचहिं नारि नर कृस तन राम बियोग॥

सगुन होहिं सुंदर सकल मन प्रसन्न सब केर।
प्रभु आगवन जनाव जनु नगर रम्य चहुँ फेर॥
कौसल्यादि मातु सब मन अनंद अस हो।
आयउ प्रभु श्री अनुज जुत कहन चहत अब को॥
भरत नयन भुज दच्छिन फरकत बारहिं बार।
जानि सगुन मन हरष अति लागे करन बिचार॥
रहे एक दिन अवधि अधारा। समुझत मन दुख भयउ अपारा॥
कारन कवन नाथ नहिं आयउ। जानि कुटिल किधौं मोहि बिसरायउ॥
अहह धन्य लछिमन बड़भागी। राम पदारबिंदु अनुरागी॥
कपटी कुटिल मोहि प्रभु चीन्हा। ताते नाथ संग नहिं लीन्हा॥
जौं करनी समुझै प्रभु मोरी। नहिं निस्तार कलप सत कोरी॥
जन अवगुन प्रभु मान न का। दीन बंधु अति मृदुल सुभा॥
मोरि जियँ भरोस दृढ़ सो। मिलिहहिं राम सगुन सुभ हो॥
बीतें अवधि रहहि जौं प्राना। अधम कवन जग मोहि समाना॥

दो. राम बिरह सागर महँ भरत मगन मन होत।
बिप्र रूप धरि पवन सुत आ गयउ जनु पोत॥ १क॥

बैठि देखि कुसासन जटा मुकुट कृस गात।

राम राम रघुपति जपत स्त्रवत नयन जलजात ॥ १ख ॥

देखत हनूमान अति हरषे । पुलक गात लोचन जल बरषे ॥
मन महँ बहुत भाँति सुख मानी । बोले श्रवन सुधा सम बानी ॥
जासु बिरहँ सोचहु दिन राती । रटहु निरंतर गुन गन पाँती ॥
रघुकुल तिलक सुजन सुखदाता । आयउ कुसल देव मुनि त्राता ॥
रिपु रन जीति सुजस सुर गावत । सीता सहित अनुज प्रभु आवत ॥
सुनत बचन बिसरे सब दूखा । तृषावंत जिमि पा पियूषा ॥
को तुम्ह तात कहाँ ते आ । मोहि परम प्रिय बचन सुना ॥
मारुत सुत मैं कपि हनुमाना । नामु मोर सुनु कृपानिधाना ॥
दीनबंधु रघुपति कर किंकर । सुनत भरत भेंटे उठि सादर ॥
मिलत प्रेम नहिं हृदयँ समाता । नयन स्त्रवत जल पुलकित गाता ॥
कपि तव दरस सकल दुख बीते । मिले आजु मोहि राम पिरीते ॥
बार बार बूझी कुसलाता । तो कहुँ दैं काह सुनु भ्राता ॥
एहि संदेस सरिस जग माहीं । करि बिचार देखैं कछु नाहीं ॥
नाहिन तात उरिन मैं तोही । अब प्रभु चरित सुनावहु मोही ॥
तब हनुमंत ना पद माथा । कहे सकल रघुपति गुन गाथा ॥
कहु कपि कबहुँ कृपाल गोसां । सुमिरहिं मोहि दास की नां ॥

छं. निज दास ज्यों रघुबंसभूषन कबहुँ मम सुमिरन कर् यो ।
सुनि भरत बचन बिनीत अति कपि पुलकित तन चरनन्हि पर् यो ॥
रघुबीर निज मुख जासु गुन गन कहत अग जग नाथ जो ।
काहे न हो बिनीत परम पुनीत सदगुन सिंधु सो ॥

दो. राम प्रान प्रिय नाथ तुम्ह सत्य बचन मम तात ।
पुनि पुनि मिलत भरत सुनि हरष न हृदयँ समात ॥ २क ॥

सो. भरत चरन सिरु ना तुरित गयउ कपि राम पहिं ।
कही कुसल सब जा हरषि चले प्रभु जान चढ़ि ॥ २ख ॥

हरषि भरत कोसलपुर आ । समाचार सब गुरहि सुना ॥
पुनि मंदिर महँ बात जना । आवत नगर कुसल रघुरा ॥
सुनत सकल जननीं उठि धां । कहि प्रभु कुसल भरत समुझा ॥
समाचार पुरबासिन्ह पा । नर अरु नारि हरषि सब धा ॥
दधि दुर्बा रोचन फल फूला । नव तुलसी दल मंगल मूला ॥
भरि भरि हेम थार भामिनी । गावत चलिं सिंधु सिंधुरगामिनी ॥
जे जैसेहिं तैसेहिं उटि धावहिं । बाल बृद्ध कहँ संग न लावहिं ॥
एक एकन्ह कहँ बूझहिं भा । तुम्ह देखे दयाल रघुरा ॥

अवधपुरी प्रभु आवत जानी। भ सकल सोभा कै खानी॥
बहइ सुहावन त्रिबिध समीरा। भइ सरजू अति निर्मल नीरा॥

दो. हरषित गुर परिजन अनुज भूसुर बृंद समेत।
चले भरत मन प्रेम अति सन्मुख कृपानिकेत॥ ३क॥

बहुतक चढ़ी अटारिन्ह निरखहिं गगन बिमान।
देखि मधुर सुर हरषित करहिं सुमंगल गान॥ ३ख॥

राका ससि रघुपति पुर सिंधु देखि हरषान।
बढ़यो कोलाहल करत जनु नारि तरंग समान॥ ३ग॥

इहाँ भानुकुल कमल दिवाकर। कपिन्ह देखावत नगर मनोहर॥
सुनु कपीस अंगद लंकेसा। पावन पुरी रुचिर यह देसा॥
जद्यपि सब बैकुंठ बखाना। बेद पुरान बिदित जगु जाना॥
अवधपुरी सम प्रिय नहिं सो। यह प्रसंग जानइ को को॥
जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि। उत्तर दिसि बह सरजू पावनि॥
जा मज्जन ते बिनहिं प्रयासा। मम समीप नर पावहिं बासा॥
अति प्रिय मोहि इहाँ के बासी। मम धामदा पुरी सुख रासी॥

हरषे सब कपि सुनि प्रभु बानी। धन्य अवध जो राम बखानी॥

दो. आवत देखि लोग सब कृपासिंधु भगवान।
नगर निकट प्रभु प्रेरे उतरे भूमि बिमान॥ ४क॥

उतरि कहे प्रभु पुष्पकहि तुम्ह कुबेर पहिं जाहु।
प्रेरित राम चले सो हरषु बिरहु अति ताहु॥ ४ख॥

आ भरत संग सब लोगा। कृस तन श्रीरघुबीर बियोगा॥
बामदेव बसिष्ठ मुनिनायक। देखे प्रभु महि धरि धनु सायक॥
धा धरे गुर चरन सरोरुह। अनुज सहित अति पुलक तनोरुह॥
भेंटि कुसल बूझी मुनिराया। हमरें कुसल तुम्हारिहिं दाया॥
सकल द्विजन्ह मिलि नायउ माथा। धर्म धुरंधर रघुकुलनाथा॥
गहे भरत पुनि प्रभु पद पंकज। नमत जिन्हहि सुर मुनि संकर अज॥
परे भूमि नहिं उठत उठा। बर करि कृपासिंधु उर ला॥
स्यामल गात रोम भ ठाढ़े। नव राजीव नयन जल बाढ़े॥

छं. राजीव लोचन स्रवत जल तन ललित पुलकावलि बनी।
अति प्रेम हृदयँ लगा अनुजहि मिले प्रभु त्रिभुन धनी॥

प्रभु मिलत अनुजहि सोह मो पहिं जाति नहिं उपमा कही।
जनु प्रेम अरु सिंगार तनु धरि मिले बर सुषमा लही॥ १॥

बूझत कृपानिधि कुसल भरतहि बचन बेगि न आव।
सुनु सिवा सो सुख बचन मन ते भिन्न जान जो पाव॥
अब कुसल कौसलनाथ आरत जानि जन दरसन दियो।
बूड़त बिरह बारीस कृपानिधान मोहि कर गहि लियो॥ २॥

दो. पुनि प्रभु हरषि सत्रुहन भेंटे हृदयँ लगा।
लछिमन भरत मिले तब परम प्रेम दो भा॥ ५॥

भरतानुज लछिमन पुनि भेंटे। दुसह बिरह संभव दुख मेटे॥
सीता चरन भरत सिरु नावा। अनुज समेत परम सुख पावा॥
प्रभु बिलोकि हरषे पुरबासी। जनित बियोग बिपति सब नासी॥
प्रेमातुर सब लोग निहारी। कौतुक कीन्ह कृपाल खरारी॥
अमित रूप प्रगटे तेहि काला। जथाजोग मिले सबहि कृपाला॥
कृपादृष्टि रघुबीर बिलोकी। कि सकल नर नारि बिसोकी॥
छन महिं सबहि मिले भगवाना। उमा मरम यह काहुँ न जाना॥
एहि बिधि सबहि सुखी करि रामा। आगें चले सील गुन धामा॥

कौसल्यादि मातु सब धा। निरखि बच्छ जनु धेनु लवा॥

छं. जनु धेनु बालक बच्छ तजि गृहँ चरन बन परबस गं।
दिन अंत पुर रुख स्रवत थन हुंकार करि धावत भ॥
अति प्रेम सब मातु भेटीं बचन मृदु बहुबिधि कहे।
गइ बिषम बियोग भव तिन्ह हरष सुख अगनित लहे॥

दो. भेटे तनय सुमित्राँ राम चरन रति जानि।
रामहि मिलत कैके हृदयँ बहुत सकुचानि॥ ६क॥

लछिमन सब मातन्ह मिलि हरषे आसिष पा।
कैके कहँ पुनि पुनि मिले मन कर छोभु न जा॥ ६॥

सासुन्ह सबनि मिली बैदेही। चरनन्हि लागि हरषु अति तेही॥
देहिं असीस बूझि कुसलाता। हो अचल तुम्हार अहिवाता॥
सब रघुपति मुख कमल बिलोकहिं। मंगल जानि नयन जल रोकहिं॥
कनक थार आरति उतारहिं। बार बार प्रभु गात निहारहिं॥
नाना भाँति निछावरि करहीं। परमानंद हरष उर भरहीं॥
कौसल्या पुनि पुनि रघुबीरहि। चितवति कृपासिंधु रनधीरहि॥

हृदयँ बिचारति बारहिं बारा। कवन भाँति लंकापति मारा॥
अति सुकुमार जुगल मेरे बारे। निसिचर सुभट महाबल भारे॥

दो. लछिमन अरु सीता सहित प्रभुहि बिलोकति मातु।
परमानंद मगन मन पुनि पुनि पुलकित गातु॥ ७॥

लंकापति कपीस नल नीला। जामवंत अंगद सुभसीला॥
हनुमदादि सब बानर बीरा। धरे मनोहर मनुज सरीरा॥
भरत सनेह सील ब्रत नेमा। सादर सब बरनहिं अति प्रेमा॥
देखि नगरबासिन्ह कै रीती। सकल सराहहि प्रभु पद प्रीती॥
पुनि रघुपति सब सखा बोला। मुनि पद लागहु सकल सिखा॥
गुर बसिष्ट कुलपूज्य हमारे। इन्ह की कृपाँ दनुज रन मारे॥
ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे। भ समर सागर कहँ बेरे॥
मम हित लागि जन्म इन्ह हारे। भरतहु ते मोहि अधिक पिआरे॥
सुनि प्रभु बचन मगन सब भ। निमिष निमिष उपजत सुख न॥

दो. कौसल्या के चरनन्हि पुनि तिन्ह नायउ माथ॥
आसिष दीन्हे हरषि तुम्ह प्रिय मम जिमि रघुनाथ॥ ८क॥

सुमन बृष्टि नभ संकुल भवन चले सुखकंद।
चढ़ी अटारिन्ह देखहिं नगर नारि नर बृंद॥ ८ख॥

कंचन कलस बिचित्र सँवारे। सबहिं धरे सजि निज निज द्वारे॥
बंदनवार पताका केतू। सबन्हि बना मंगल हेतू॥
बीथीं सकल सुगंध सिंचा। गजमनि रचि बहु चौक पुरा॥
नाना भाँति सुमंगल साजे। हरषि नगर निसान बहु बाजे॥
जहँ तहँ नारि निछावर करहीं। देहिं असीस हरष उर भरहीं॥
कंचन थार आरती नाना। जुबती सजें करहिं सुभ गाना॥
करहिं आरती आरतिहर कें। रघुकुल कमल बिपिन दिनकर कें॥
पुर सोभा संपति कल्याना। निगम सेष सारदा बखाना॥
ते यह चरित देखि ठगि रहहीं। उमा तासु गुन नर किमि कहहीं॥

दो. नारि कुमुदिनीं अवध सर रघुपति बिरह दिनेस।
अस्त भँ बिगसत भं निरखि राम राकेस॥ ९क॥

होहिं सगुन सुभ बिबिध बिधि बाजहिं गगन निसान।
पुर नर नारि सनाथ करि भवन चले भगवान॥ ९ख॥

प्रभु जानी कैके लजानी। प्रथम तासु गृह ग भवानी॥
ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा। पुनि निज भवन गवन हरि कीन्हा॥
कृपासिंधु जब मंदिर ग। पुर नर नारि सुखी सब भ॥
गुर बसिष्ट द्विज लि बुला। आजु सुघरी सुदिन समुदा॥
सब द्विज देहु हरषि अनुसासन। रामचंद्र बैठहिं सिंघासन॥
मुनि बसिष्ट के बचन सुहा। सुनत सकल बिप्रन्ह अति भा॥
कहहिं बचन मृदु बिप्र अनेका। जग अभिराम राम अभिषेका॥
अब मुनिबर बिलंब नहिं कीजे। महाराज कहँ तिलक करीजै॥

दो. तब मुनि कहे सुमंत्र सन सुनत चले हरषा।
रथ अनेक बहु बाजि गज तुरत सँवारे जा॥ १०क॥

जहँ तहँ धावन पठइ पुनि मंगल द्रब्य मगा।
हरष समेत बसिष्ट पद पुनि सिरु नायउ आ॥ १०ख॥

नवान्हपारायण आठवाँ विश्राम

अवधपुरी अति रुचिर बना। देवन्ह सुमन बृष्टि झरि ला॥
राम कहा सेवकन्ह बुला। प्रथम सखन्ह अन्हवावहु जा॥
सुनत बचन जहँ तहँ जन धा। सुग्रीवादि तुरत अन्हवा॥

पुनि करुनानिधि भरतु हँकारे। निज कर राम जटा निरुआरे॥
अन्हवा प्रभु तीनि भा। भगत बछल कृपाल रघुरा॥
भरत भाग्य प्रभु कोमलता। सेष कोटि सत सकहिं न गा॥
पुनि निज जटा राम बिबरा। गुर अनुसासन मागि नहा॥
करि मज्जन प्रभु भूषन साजे। अंग अनंग देखि सत लाजे॥

दो. सासुन्ह सादर जानकिहि मज्जन तुरत करा।
दिब्य बसन बर भूषन अँग अँग सजे बना॥ ११क॥

राम बाम दिसि सोभति रमा रूप गुन खानि।
देखि मातु सब हरषीं जन्म सुफल निज जानि॥ ११ख॥

सुनु खगेस तेहि अवसर ब्रह्मा सिव मुनि बृंद।
चढ़ि बिमान आ सब सुर देखन सुखकंद॥ ११ग॥

प्रभु बिलोकि मुनि मन अनुरागा। तुरत दिब्य सिंघासन मागा॥
रबि सम तेज सो बरनि न जा। बैठे राम द्विजन्ह सिरु ना॥
जनकसुता समेत रघुरा। पेखि प्रहरषे मुनि समुदा॥
बेद मंत्र तब द्विजन्ह उचारे। नभ सुर मुनि जय जयति पुकारे॥

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा। पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा॥
सुत बिलोकि हरषीं महतारी। बार बार आरती उतारी॥
बिप्रन्ह दान बिबिध बिधि दीन्हे। जाचक सकल अजाचक कीन्हे॥
सिंघासन पर त्रिभुन सा। देखि सुरन्ह दुंदुभीं बजां॥

छं. नभ दुंदुभीं बाजहिं बिपुल गंधर्ब किंनर गावहीं।
नाचहिं अपछरा बृंद परमानंद सुर मुनि पावहीं॥
भरतादि अनुज बिभीषनांगद हनुमदादि समेत ते।
गहें छत्र चामर ब्यजन धनु असि चर्म सक्ति बिराजते॥ १॥

श्री सहित दिनकर बंस बूषन काम बहु छबि सोह।
नव अंबुधर बर गात अंबर पीत सुर मन मोह॥
मुकुटांगदादि बिचित्र भूषन अंग अंगन्हि प्रति सजे।
अंभोज नयन बिसाल उर भुज धन्य नर निरखंति जे॥ २॥

दो. वह सोभा समाज सुख कहत न बनइ खगेस।
बरनहिं सारद सेष श्रुति सो रस जान महेस॥ १२क॥

भिन्न भिन्न अस्तुति करि ग सुर निज निज धाम।

बंदी बेष बेद तब आ जहँ श्रीराम ॥ १२ख ॥

प्रभु सर्बग्य कीन्ह अति आदर कृपानिधान ।
लखे न काहूँ मरम कछु लगे करन गुन गान ॥ १२ग ॥

छं. जय सगुन निर्गुन रूप अनूप भूप सिरोमने ।
दसकंधरादि प्रचंड निसिचर प्रबल खल भुज बल हने ॥
अवतार नर संसार भार बिभंजि दारुन दुख दहे ।
जय प्रनतपाल दयाल प्रभु संजुक्त सक्ति नमामहे ॥ १ ॥

तव बिषम माया बस सुरासुर नाग नर अग जग हरे ।
भव पंथ भ्रमत अमित दिवस निसि काल कर्म गुननि भरे ॥
जे नाथ करि करुना बिलोके त्रिबिधि दुख ते निर्बहे ।
भव खेद छेदन दच्छ हम कहुँ रच्छ राम नमामहे ॥ २ ॥

जे ग्यान मान बिमत्त तव भव हरनि भक्ति न आदरी ।
ते पा सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी ॥
बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे हो रहे ।
जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भव नाथ सो समरामहे ॥ ३ ॥

जे चरन सिव अज पूज्य रज सुभ परसि मुनिपतिनी तरी।
नख निर्गता मुनि बंदिता त्रेलोक पावनि सुरसरी॥
ध्वज कुलिस अंकुस कंज जुत बन फिरत कंटक किन लहे।
पद कंज द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामहे॥ ४॥

अब्यक्तमूलमनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने।
षट कंध साखा पंच बीस अनेक पर्न सुमन घने॥
फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे।
पल्लवत फूलत नवल नित संसार बिटप नमामहे॥ ५॥

जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभवगम्य मनपर ध्यावहीं।
ते कहहुँ जानहुँ नाथ हम तव सगुन जस नित गावहीं॥
करुनायतन प्रभु सदगुनाकर देव यह बर मागहीं।
मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं॥ ६॥

दो. सब के देखत बेदन्ह बिनती कीन्हि उदार।
अंतर्धान भ पुनि ग ब्रह्म आगार॥ १३क॥

बैनतेय सुनु संभु तब आ जहँ रघुबीर।
बिनय करत गदगद गिरा पूरित पुलक सरीर॥ १३ख॥

छं. जय राम रमारमनं समनं। भव ताप भयाकुल पाहि जनं॥
अवधेस सुरेस रमेस बिभो। सरनागत मागत पाहि प्रभो॥ १॥

दससीस बिनासन बीस भुजा। कृत दूरि महा महि भूरि रुजा॥
रजनीचर बृंद पतंग रहे। सर पावक तेज प्रचंड दहे॥ २॥

महि मंडल मंडन चारुतरं। धृत सायक चाप निषंग बरं॥
मद मोह महा ममता रजनी। तम पुंज दिवाकर तेज अनी॥ ३॥

मनजात किरात निपात किए। मृग लोग कुभोग सरेन हिए॥
हति नाथ अनाथनि पाहि हरे। बिषया बन पावँर भूलि परे॥ ४॥

बहु रोग बियोगन्हि लोग हए। भवदंघ्रि निरादर के फल ए॥
भव सिंधु अगाध परे नर ते। पद पंकज प्रेम न जे करते॥ ५॥

अति दीन मलीन दुखी नितहीं। जिन्ह के पद पंकज प्रीति नहीं॥

अवलंब भवंत कथा जिन्ह के ॥ प्रिय संत अनंत सदा तिन्ह कें ॥ ६ ॥

नहिं राग न लोभ न मान मदा ॥ तिन्ह कें सम बैभव वा बिपदा ॥
एहि ते तव सेवक होत मुदा । मुनि त्यागत जोग भरोस सदा ॥ ७ ॥

करि प्रेम निरंतर नेम लिँ । पद पंकज सेवत सुद्ध हिँ ॥
सम मानि निरादर आदरही । सब संत सुखी बिचरंति मही ॥ ८ ॥

मुनि मानस पंकज भृंग भजे । रघुबीर महा रनधीर अजे ॥
तव नाम जपामि नमामि हरी । भव रोग महागद मान अरी ॥ ९ ॥

गुन सील कृपा परमायतनं । प्रनमामि निरंतर श्रीरमनं ॥
रघुनंद निकंदय द्वंद्वघनं । महिपाल बिलोकय दीन जनं ॥ १० ॥

दो. बार बार बर मागउँ हरषि देहु श्रीरंग ।
पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग ॥ १४क ॥

बरनि उमापति राम गुन हरषि ग कैलास ।
तब प्रभु कपिन्ह दिवा सब बिधि सुखप्रद बास ॥ १४ख ॥

सुनु खगपति यह कथा पावनी। त्रिबिध ताप भव भय दावनी॥
महाराज कर सुभ अभिषेका। सुनत लहहिं नर बिरति बिबेका॥
जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं। सुख संपति नाना बिधि पावहिं॥
सुर दुर्लभ सुख करि जग माहीं। अंतकाल रघुपति पुर जाहीं॥
सुनहिं बिमुक्त बिरत अरु बिषी। लहहिं भगति गति संपति नई॥
खगपति राम कथा मैं बरनी। स्वमति बिलास त्रास दुख हरनी॥
बिरति बिबेक भगति दृढ़ करनी। मोह नदी कहँ सुंदर तरनी॥
नित नव मंगल कौसलपुरी। हरषित रहहिं लोग सब कुरी॥
नित नइ प्रीति राम पद पंकज। सबकें जिन्हहि नमत सिव मुनि अज॥
मंगन बहु प्रकार पहिरा। द्विजन्ह दान नाना बिधि पा॥

दो. ब्रह्मानंद मगन कपि सब कें प्रभु पद प्रीति।
जात न जाने दिवस तिन्ह ग मास षट बीति॥ १५॥

बिसरे गृह सपनेहुँ सुधि नाहीं। जिमि परद्रोह संत मन माही॥
तब रघुपति सब सखा बोला। आ सबन्हि सादर सिरु ना॥
परम प्रीति समीप बैठारे। भगत सुखद मृदु बचन उचारे॥
तुम्ह अति कीन्ह मोरि सेवकाई। मुख पर केहि बिधि करौं बड़ाई॥

ताते मोहि तुम्ह अति प्रिय लागे। मम हित लागि भवन सुख त्यागे॥
अनुज राज संपति बैदेही। देह गेह परिवार सनेही॥
सब मम प्रिय नहिं तुम्हहि समाना। मृषा न कहउँ मोर यह बाना॥
सब के प्रिय सेवक यह नीती। मोरें अधिक दास पर प्रीती॥

दो. अब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दृढ़ नेम।
सदा सर्बगत सर्बहित जानि करेहु अति प्रेम॥ १६॥

सुनि प्रभु बचन मगन सब भ। को हम कहाँ बिसरि तन ग॥
एकटक रहे जोरि कर आगे। सकहिं न कछु कहि अति अनुरागे॥
परम प्रेम तिन्ह कर प्रभु देखा। कहा बिबिध बिधि ग्यान बिसेषा॥
प्रभु सन्मुख कछु कहन न पारहिं। पुनि पुनि चरन सरोज निहारहिं॥
तब प्रभु भूषन बसन मगा। नाना रंग अनूप सुहा॥
सुग्रीवहि प्रथमहिं पहिरा। बसन भरत निज हाथ बना॥
प्रभु प्रेरित लछिमन पहिरा। लंकापति रघुपति मन भा॥
अंगद बैठ रहा नहिं डोला। प्रीति देखि प्रभु ताहि न बोला॥

दो. जामवंत नीलादि सब पहिरा रघुनाथ।
हियँ धरि राम रूप सब चले ना पद माथ॥ १७क॥

तब अंगद उठि ना सिरु सजल नयन कर जोरि।
अति बिनीत बोले बचन मनहुँ प्रेम रस बोरि॥ १७ख॥

सुनु सर्बग्य कृपा सुख सिंधो। दीन दयाकर आरत बंधो॥
मरती बेर नाथ मोहि बाली। गयउ तुम्हारेहि कोंछें घाली॥
असरन सरन बिरदु संभारी। मोहि जनि तजहु भगत हितकारी॥
मोरें तुम्ह प्रभु गुर पितु माता। जाँ कहाँ तजि पद जलजाता॥
तुम्हहि बिचारि कहहु नरनाहा। प्रभु तजि भवन काज मम काहा॥
बालक ग्यान बुद्धि बल हीना। राखहु सरन नाथ जन दीना॥
नीचि टहल गृह कै सब करिहउँ। पद पंकज बिलोकि भव तरिहउँ॥
अस कहि चरन परे प्रभु पाही। अब जनि नाथ कहहु गृह जाही॥

दो. अंगद बचन बिनीत सुनि रघुपति करुना सींव।
प्रभु उठा उर लायउ सजल नयन राजीव॥ १८क॥

निज उर माल बसन मनि बालितनय पहिरा।
बिदा कीन्हि भगवान तब बहु प्रकार समुझा॥ १८ख॥

भरत अनुज सौमित्र समेता। पठवन चले भगत कृत चेता॥
अंगद हृदयँ प्रेम नहिं थोरा। फिरि फिरि चितव राम कीं ओरा॥
बार बार कर दंड प्रनामा। मन अस रहन कहहिं मोहि रामा॥
राम बिलोकनि बोलनि चलनी। सुमिरि सुमिरि सोचत हँसि मिलनी॥
प्रभु रुख देखि बिनय बहु भाषी। चले हृदयँ पद पंकज राखी॥
अति आदर सब कपि पहुँचा। भान्ह सहित भरत पुनि आ॥
तब सुग्रीव चरन गहि नाना। भाँति बिनय कीन्हे हनुमाना॥
दिन दस करि रघुपति पद सेवा। पुनि तव चरन देखिहउँ देवा॥
पुन्य पुंज तुम्ह पवनकुमारा। सेवहु जा कृपा आगारा॥
अस कहि कपि सब चले तुरंता। अंगद कहइ सुनहु हनुमंता॥

दो. कहेहु दंडवत प्रभु सैं तुम्हहि कहउँ कर जोरि।
बार बार रघुनायकहि सुरति कराहु मोरि॥ १९क॥

अस कहि चले बालिसुत फिरि आयउ हनुमंत।
तासु प्रीति प्रभु सन कहि मगन भ भगवंत॥ ९ख॥

कुलिसहु चाहि कठोर अति कोमल कुसुमहु चाहि।
चित्त खगेस राम कर समुझि परइ कहु काहि॥ १९ग॥

पुनि कृपाल लियो बोलि निषादा। दीन्हे भूषन बसन प्रसादा॥
जाहु भवन मम सुमिरन करेहू। मन क्रम बचन धर्म अनुसरेहू॥
तुम्ह मम सखा भरत सम भ्राता। सदा रहेहु पुर आवत जाता॥
बचन सुनत उपजा सुख भारी। परे चरन भरि लोचन बारी॥
चरन नलिन उर धरि गृह आवा। प्रभु सुभा परिजनन्हि सुनावा॥
रघुपति चरित देखि पुरबासी। पुनि पुनि कहहिं धन्य सुखरासी॥
राम राज बैठें त्रेलोका। हरषित भ ग सब सोका॥
बयरु न कर काहू सन को। राम प्रताप बिषमता खो॥

दो. बरनाश्रम निज निज धरम बनिरत बेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग॥ २०॥

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती॥
चारि चरन धर्म जग माहीं। पूरि रहा सपनेहुँ अघ नाहीं॥
राम भगति रत नर अरु नारी। सकल परम गति के अधिकारी॥
अल्पमृत्यु नहिं कवनि पीरा। सब सुंदर सब बिरुज सरीरा॥
नहिं दरिद्र को दुखी न दीना। नहिं को अबुध न लच्छन हीना॥

सब निर्दंभ धर्मरत पुनी। नर अरु नारि चतुर सब गुनी॥
सब गुनग्य पंडित सब ग्यानी। सब कृतग्य नहिं कपट सयानी॥

दो. राम राज नभगेस सुनु सचराचर जग माहिं॥
काल कर्म सुभाव गुन कृत दुख काहुहि नाहिं॥ २१॥

भूमि सप्त सागर मेखला। एक भूप रघुपति कोसला॥
भुन अनेक रोम प्रति जासू। यह प्रभुता कछु बहुत न तासू॥
सो महिमा समुझत प्रभु केरी। यह बरनत हीनता घनेरी॥
सो महिमा खगेस जिन्ह जानी। फिरी एहिं चरित तिन्हहुँ रति मानी॥
सो जाने कर फल यह लीला। कहहिं महा मुनिबर दमसीला॥
राम राज कर सुख संपदा। बरनि न सकइ फनीस सारदा॥
सब उदार सब पर उपकारी। बिप्र चरन सेवक नर नारी॥
एकनारि ब्रत रत सब झारी। ते मन बच क्रम पति हितकारी॥

दो. दंड जतिन्ह कर भेद जहँ नर्तक नृत्य समाज।
जीतहु मनहि सुनि अस रामचंद्र कें राज॥ २२॥

फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन। रहहि एक सँग गज पंचानन॥

खग मृग सहज बयरु बिसरा। सबन्हि परस्पर प्रीति बढ़ा॥
कूजहिं खग मृग नाना बृंदा। अभय चरहिं बन करहिं अनंदा॥
सीतल सुरभि पवन बह मंदा। गूंजत अलि लै चलि मकरंदा॥
लता बिटप मागें मधु चवहीं। मनभावतो धेनु पय स्रवहीं॥
ससि संपन्न सदा रह धरनी। त्रेताँ भइ कृतजुग कै करनी॥
प्रगटीं गिरिन्ह बिबिध मनि खानी। जगदातमा भूप जग जानी॥
सरिता सकल बहहिं बर बारी। सीतल अमल स्वाद सुखकारी॥
सागर निज मरजादाँ रहहीं। डारहिं रत्न तटन्हि नर लहहीं॥
सरसिज संकुल सकल तड़ागा। अति प्रसन्न दस दिसा बिभागा॥

दो. बिधु महि पूर मयूखन्हि रबि तप जेतनेहि काज।
मागें बारिद देहिं जल रामचंद्र के राज॥ २३॥

कोटिन्ह बाजिमेध प्रभु कीन्हे। दान अनेक द्विजन्ह कहँ दीन्हे॥
श्रुति पथ पालक धर्म धुरंधर। गुनातीत अरु भोग पुरंदर॥
पति अनुकूल सदा रह सीता। सोभा खानि सुसील बिनीता॥
जानति कृपासिंधु प्रभुता। सेवति चरन कमल मन ला॥
जद्यपि गृहँ सेवक सेवकिनी। बिपुल सदा सेवा बिधि गुनी॥
निज कर गृह परिचरजा कर। रामचंद्र आयसु अनुसर॥

जेहि बिधि कृपासिंधु सुख मानइ। सो कर श्री सेवा बिधि जानइ॥
कौसल्यादि सासु गृह माहीं। सेवइ सबन्हि मान मद नाहीं॥
उमा रमा ब्रह्मादि बंदिता। जगदंबा संततमनिंदिता॥

दो. जासु कृपा कटाच्छु सुर चाहत चितव न सो।
राम पदारबिंद रति करति सुभावहि खो॥ २४॥

सेवहिं सानकूल सब भा। राम चरन रति अति अधिका॥
प्रभु मुख कमल बिलोकत रहहीं। कबहुँ कृपाल हमहि कछु कहहीं॥
राम करहिं भ्रातन्ह पर प्रीती। नाना भाँति सिखावहिं नीती॥
हरषित रहहिं नगर के लोगा। करहिं सकल सुर दुर्लभ भोगा॥
अहनिसि बिधिहि मनावत रहहीं। श्रीरघुबीर चरन रति चहहीं॥
दु सुत सुन्दर सीताँ जा। लव कुस बेद पुरानन्ह गा॥
दो बिज बिन गुन मंदिर। हरि प्रतिबिंब मनहुँ अति सुंदर॥
दु दु सुत सब भ्रातन्ह केरे। भ रूप गुन सील घनेरे॥

दो. ग्यान गिरा गोतीत अज माया मन गुन पार।
सो सच्चिदानंद घन कर नर चरित उदार॥ २५॥

प्रातकाल सर करि मज्जन। बैठहिं सभाँ संग द्विज सज्जन॥
बेद पुरान बसिष्ट बखानहिं। सुनहिं राम जद्यपि सब जानहिं॥
अनुजन्ह संजुत भोजन करहीं। देखि सकल जननीं सुख भरहीं॥
भरत सत्रुहन दोनउ भा। सहित पवनसुत उपबन जा॥
बूझहिं बैठि राम गुन गाहा। कह हनुमान सुमति अवगाहा॥
सुनत बिमल गुन अति सुख पावहिं। बहुरि बहुरि करि बिनय कहावहिं॥
सब कें गृह गृह होहिं पुराना। रामचरित पावन बिधि नाना॥
नर अरु नारि राम गुन गानहिं। करहिं दिवस निसि जात न जानहिं॥

दो. अवधपुरी बासिन्ह कर सुख संपदा समाज।
सहस सेष नहिं कहि सकहिं जहँ नृप राम बिराज॥ २६॥

नारदादि सनकादि मुनीसा। दरसन लागि कोसलाधीसा॥
दिन प्रति सकल अजोध्या आवहिं। देखि नगरु बिरागु बिसरावहिं॥
जातरूप मनि रचित अटारीं। नाना रंग रुचिर गच ढारीं॥
पुर चहुँ पास कोट अति सुंदर। रचे कँगूरा रंग रंग बर॥
नव ग्रह निकर अनीक बना। जनु घेरी अमरावति आ॥
महि बहु रंग रचित गच काँचा। जो बिलोकि मुनिबर मन नाचा॥
धवल धाम ऊपर नभ चुंबत। कलस मनहुँ रबि ससि दुति निंदत॥

बहु मनि रचित झरोखा भ्राजहिं। गृह गृह प्रति मनि दीप बिराजहिं॥

छं. मनि दीप राजहिं भवन भ्राजहिं देहरीं बिद्रुम रची।
मनि खंभ भीति बिरंचि बिरची कनक मनि मरकत खची॥
सुंदर मनोहर मंदिरायत अजिर रुचिर फटिक रचे।
प्रति द्वार द्वार कपाट पुरट बना बहु बज्रन्हि खचे॥

दो. चारु चित्रसाला गृह गृह प्रति लिखे बना।
राम चरित जे निरख मुनि ते मन लेहिं चोरा॥ २७॥

सुमन बाटिका सबहिं लगा। बिबिध भाँति करि जतन बना॥
लता ललित बहु जाति सुहा। फूलहिं सदा बंसत कि ना॥
गुंजत मधुकर मुखर मनोहर। मारुत त्रिबिध सदा बह सुंदर॥
नाना खग बालकन्हि जिआ। बोलत मधुर उड़ात सुहा॥
मोर हंस सारस पारावत। भवननि पर सोभा अति पावत॥
जहँ तहँ देखहिं निज परिछाहीं। बहु बिधि कूजहिं नृत्य कराहीं॥
सुक सारिका पढ़ावहिं बालक। कहहु राम रघुपति जनपालक॥
राज दुआर सकल बिधि चारू। बीथीं चौहट रूचिर बजारू॥

छं. बाजार रुचिर न बनइ बरनत बस्तु बिनु गथ पा।
जहँ भूप रमानिवास तहँ की संपदा किमि गा॥
बैठे बजाज सराफ बनिक अनेक मनहुँ कुबेर ते।
सब सुखी सब सच्चरित सुंदर नारि नर सिसु जरठ जे॥

दो. उत्तर दिसि सरजू बह निर्मल जल गंभीर।
बाँधे घाट मनोहर स्वल्प पंक नहिं तीर॥ २८॥

दूरि फराक रुचिर सो घाटा। जहँ जल पिहिं बाजि गज ठाटा॥
पनिघट परम मनोहर नाना। तहाँ न पुरुष करहिं अस्नाना॥
राजघाट सब बिधि सुंदर बर। मज्जहिं तहाँ बरन चारि नर॥
तीर तीर देवन्ह के मंदिर। चहुँ दिसि तिन्ह के उपबन सुंदर॥
कहुँ कहुँ सरिता तीर उदासी। बसहिं ग्यान रत मुनि संन्यासी॥
तीर तीर तुलसिका सुहा। बृंद बृंद बहु मुनिन्ह लगा॥
पुर सोभा कछु बरनि न जा। बाहेर नगर परम रुचिरा॥
देखत पुरी अखिल अघ भागा। बन उपबन बापिका तड़ागा॥

छं. बापीं तड़ाग अनूप कूप मनोहरायत सोहहीं।
सोपान सुंदर नीर निर्मल देखि सुर मुनि मोहहीं॥

बहु रंग कंज अनेक खग कूजहिं मधुप गुंजारहीं।
आराम रम्य पिकादि खग रव जनु पथिक हंकारहीं॥

दो. रमानाथ जहँ राजा सो पुर बरनि कि जा।
अनिमादिक सुख संपदा रहीं अवध सब छा॥ २९॥

जहँ तहँ नर रघुपति गुन गावहिं। बैठि परसपर इहइ सिखावहिं॥
भजहु प्रनत प्रतिपालक रामहि। सोभा सील रूप गुन धामहि॥
जलज बिलोचन स्यामल गातहि। पलक नयन इव सेवक त्रातहि॥
धृत सर रुचिर चाप तूनीरहि। संत कंज बन रबि रनधीरहि॥
काल कराल ब्याल खगराजहि। नमत राम अकाम ममता जहि॥
लोभ मोह मृगजूथ किरातहि। मनसिज करि हरि जन सुखदातहि॥
संसय सोक निबिड़ तम भानुहि। दनुज गहन घन दहन कृसानुहि॥
जनकसुता समेत रघुबीरहि। कस न भजहु भंजन भव भीरहि॥
बहु बासना मसक हिम रासिहि। सदा एकरस अज अबिनासिहि॥
मुनि रंजन भंजन महि भारहि। तुलसिदास के प्रभुहि उदारहि॥

दो. एहि बिधि नगर नारि नर करहिं राम गुन गान।
सानुकूल सब पर रहहिं संतत कृपानिधान॥ ३०॥

जब ते राम प्रताप खगेसा। उदित भयउ अति प्रबल दिनेसा॥
पूरि प्रकास रहे तिहुँ लोका। बहुतेन्ह सुख बहुतन मन सोका॥
जिन्हहि सोक ते कहउँ बखानी। प्रथम अबिद्या निसा नसानी॥
अघ उलूक जहँ तहाँ लुकाने। काम क्रोध कैरव सकुचाने॥
बिबिध कर्म गुन काल सुभा। ए चकोर सुख लहहिं न का॥
मत्सर मान मोह मद चोरा। इन्ह कर हुनर न कवनिहुँ ओरा॥
धरम तड़ाग ग्यान बिग्याना। ए पंकज बिकसे बिधि नाना॥
सुख संतोष बिराग बिबेका। बिगत सोक ए कोक अनेका॥

दो. यह प्रताप रबि जाकें उर जब करइ प्रकास।
पछिले बाढ़हिं प्रथम जे कहे ते पावहिं नास॥ ३१॥

भ्रातन्ह सहित रामु एक बारा। संग परम प्रिय पवनकुमारा॥
सुंदर उपबन देखन ग। सब तरु कुसुमित पल्लव न॥
जानि समय सनकादिक आ। तेज पुंज गुन सील सुहा॥
ब्रह्मानंद सदा लयलीना। देखत बालक बहुकालीना॥
रूप धरें जनु चारि बेदा। समदरसी मुनि बिगत बिभेदा॥
आसा बसन ब्यसन यह तिन्हहीं। रघुपति चरित हो तहँ सुनहीं॥

तहाँ रहे सनकादि भवानी। जहँ घटसंभव मुनिबर ग्यानी॥
राम कथा मुनिबर बहु बरनी। ग्यान जोनि पावक जिमि अरनी॥

दो. देखि राम मुनि आवत हरषि दंडवत कीन्ह।
स्वागत पूँछि पीत पट प्रभु बैठन कहँ दीन्ह॥ ३२॥

कीन्ह दंडवत तीनिँ भा। सहित पवनसुत सुख अधिका॥
मुनि रघुपति छबि अतुल बिलोकी। भ मगन मन सके न रोकी॥
स्यामल गात सरोरुह लोचन। सुंदरता मंदिर भव मोचन॥
एकटक रहे निमेष न लावहिं। प्रभु कर जोरें सीस नवावहिं॥
तिन्ह कै दसा देखि रघुबीरा। स्त्रवत नयन जल पुलक सरीरा॥
कर गहि प्रभु मुनिबर बैठारे। परम मनोहर बचन उचारे॥
आजु धन्य मैं सुनहु मुनीसा। तुम्हरें दरस जाहिं अघ खीसा॥
बड़े भाग पाब सतसंगा। बिनहिं प्रयास होहिं भव भंगा॥

दो. संत संग अपबर्ग कर कामी भव कर पंथ।
कहहि संत कबि कोबिद श्रुति पुरान सदग्रंथ॥ ३३॥

सुनि प्रभु बचन हरषि मुनि चारी। पुलकित तन अस्तुति अनुसारी॥

जय भगवंत अनंत अनामय। अनघ अनेक एक करुनामय॥
जय निर्गुन जय जय गुन सागर। सुख मंदिर सुंदर अति नागर॥
जय इंदिरा रमन जय भूधर। अनुपम अज अनादि सोभाकर॥
ग्यान निधान अमान मानप्रद। पावन सुजस पुरान बेद बद॥
तग्य कृतग्य अग्यता भंजन। नाम अनेक अनाम निरंजन॥
सर्ब सर्बगत सर्ब उरालय। बससि सदा हम कहुँ परिपालय॥
द्वंद बिपति भव फंद बिभंजय। हृदि बसि राम काम मद गंजय॥

दो. परमानंद कृपायतन मन परिपूरन काम।
प्रेम भगति अनपायनी देहु हमहि श्रीराम॥ ३४॥

देहु भगति रघुपति अति पावनि। त्रिबिध ताप भव दाप नसावनि॥
प्रनत काम सुरधेनु कलपतरु। हो प्रसन्न दीजै प्रभु यह बरु॥
भव बारिधि कुंभज रघुनायक। सेवत सुलभ सकल सुख दायक॥
मन संभव दारुन दुख दारय। दीनबंधु समता बिस्तारय॥
आस त्रास इरिषादि निवारक। बिनय बिबेक बिरति बिस्तारक॥
भूप मौलि मन मंडन धरनी। देहि भगति संसृति सरि तरनी॥
मुनि मन मानस हंस निरंतर। चरन कमल बंदित अज संकर॥
रघुकुल केतु सेतु श्रुति रच्छक। काल करम सुभा गुन भच्छक॥

तारन तरन हरन सब दूषन। तुलसिदास प्रभु त्रिभुवन भूषन॥

दो. बार बार अस्तुति करि प्रेम सहित सिरु ना।
ब्रह्म भवन सनकादि गे अति अभीष्ट बर पा॥ ३५॥

सनकादिक बिधि लोक सिधा। भ्रातन्ह राम चरन सिरु ना॥
पूछत प्रभुहि सकल सकुचाहीं। चितवहिं सब मारुतसुत पाहीं॥
सुनि चहहिं प्रभु मुख कै बानी। जो सुनि हो सकल भ्रम हानी॥
अंतरजामी प्रभु सभ जाना। बूझत कहहु काह हनुमाना॥
जोरि पानि कह तब हनुमंता। सुनहु दीनदयाल भगवंता॥
नाथ भरत कछु पूँछन चहहीं। प्रस्न करत मन सकुचत अहहीं॥
तुम्ह जानहु कपि मोर सुभा। भरतहि मोहि कछु अंतर का॥
सुनि प्रभु बचन भरत गहे चरना। सुनहु नाथ प्रनतारति हरना॥

दो. नाथ न मोहि संदेह कछु सपनेहुँ सोक न मोह।
केवल कृपा तुम्हारिहि कृपानंद संदोह॥ ३६॥

करउँ कृपानिधि एक ढिठा। मैं सेवक तुम्ह जन सुखदा॥
संतन्ह कै महिमा रघुरा। बहु बिधि बेद पुरानन्ह गा॥

श्रीमुख तुम्ह पुनि कीन्हि बड़ा। तिन्ह पर प्रभुहि प्रीति अधिका॥
सुना चहउँ प्रभु तिन्ह कर लच्छन। कृपासिंधु गुन ग्यान बिचच्छन॥
संत असंत भेद बिलगा। प्रनतपाल मोहि कहहु बुझा॥
संतन्ह के लच्छन सुनु भ्राता। अगनित श्रुति पुरान बिख्याता॥
संत असंतन्हि कै असि करनी। जिमि कुठार चंदन आचरनी॥
काटइ परसु मलय सुनु भा। निज गुन दे सुगंध बसा॥

दो. ताते सुर सीसन्ह चढ़त जग बल्लभ श्रीखंड।
अनल दाहि पीटत घनहिं परसु बदन यह दंड॥ ३७॥

बिषय अलंपट सील गुनाकर। पर दुख दुख सुख सुख देखे पर॥
सम अभूतरिपु बिमद बिरागी। लोभामरष हरष भय त्यागी॥
कोमलचित दीनन्ह पर दाया। मन बच क्रम मम भगति अमाया॥
सबहि मानप्रद आपु अमानी। भरत प्रान सम मम ते प्रानी॥
बिगत काम मम नाम परायन। सांति बिरति बिनती मुदितायन॥
सीतलता सरलता मयत्री। द्विज पद प्रीति धर्म जनयत्री॥
ए सब लच्छन बसहिं जासु उर। जानेहु तात संत संतत फुर॥
सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं। परुष बचन कबहूँ नहिं बोलहिं॥

दो. निंदा अस्तुति उभय सम ममता मम पद कंज।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय गुन मंदिर सुख पुंज॥ ३८॥

सनहु असंतन्ह केर सुभा। भूलेहुँ संगति करि न का॥
तिन्ह कर संग सदा दुखदा। जिमि कलपहि घालइ हरहा॥
खलन्ह हृदयँ अति ताप बिसेषी। जरहिं सदा पर संपति देखी॥
जहँ कहुँ निंदा सुनहिं परा। हरषहिं मनहुँ परी निधि पा॥
काम क्रोध मद लोभ परायन। निर्दय कपटी कुटिल मलायन॥
बयरु अकारन सब काहू सों। जो कर हित अनहित ताहू सों॥
झूठइ लेना झूठइ देना। झूठइ भोजन झूठ चबेना॥
बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा। खा महा अति हृदय कठोरा॥

दो. पर द्रोही पर दार रत पर धन पर अपबाद।
ते नर पाँवर पापमय देह धरें मनुजाद॥ ३९॥

लोभइ ओढ़न लोभइ डासन। सिस्त्रोदर पर जमपुर त्रास न॥
काहू की जौं सुनहिं बड़ा। स्वास लेहिं जनु जूड़ी आ॥
जब काहू कै देखहिं बिपती। सुखी भ मानहुँ जग नृपती॥
स्वारथ रत परिवार बिरोधी। लंपट काम लोभ अति क्रोधी॥

मातु पिता गुर बिप्र न मानहिं। आपु ग अरु घालहिं आनहिं॥
करहिं मोह बस द्रोह परावा। संत संग हरि कथा न भावा॥
अवगुन सिंधु मंदमति कामी। बेद बिदूषक परधन स्वामी॥
बिप्र द्रोह पर द्रोह बिसेषा। दंभ कपट जियँ धरें सुबेषा॥

दो. ऐसे अधम मनुज खल कृतजुग त्रेता नाहिं।
द्वापर कछुक बृंद बहु होहहिं कलिजुग माहिं॥ ४०॥

पर हित सरिस धर्म नहिं भा। पर पीड़ा सम नहिं अधमा॥
निर्नय सकल पुरान बेद कर। कहैं तात जानहिं कोबिद नर॥
नर सरीर धरि जे पर पीरा। करहिं ते सहहिं महा भव भीरा॥
करहिं मोह बस नर अघ नाना। स्वारथ रत परलोक नसाना॥
कालरूप तिन्ह कहँ मैं भ्राता। सुभ अरु असुभ कर्म फल दाता॥
अस बिचारि जे परम सयाने। भजहिं मोहि संसृत दुख जाने॥
त्यागहिं कर्म सुभासुभ दायक। भजहिं मोहि सुर नर मुनि नायक॥
संत असंतन्ह के गुन भाषे। ते न परहिं भव जिन्ह लखि राखे॥

दो. सुनहु तात माया कृत गुन अरु दोष अनेक।
गुन यह उभय न देखिहिं देखि सो अबिबेक॥ ४१॥

श्रीमुख बचन सुनत सब भा। हरषे प्रेम न हृदयँ समा॥
करहिं बिनय अति बारहिं बारा। हनूमान हियँ हरष अपारा॥
पुनि रघुपति निज मंदिर ग। एहि बिधि चरित करत नित न॥
बार बार नारद मुनि आवहिं। चरित पुनीत राम के गावहिं॥
नित नव चरन देखि मुनि जाहीं। ब्रह्मलोक सब कथा कहाहीं॥
सुनि बिरंचि अतिसय सुख मानहिं। पुनि पुनि तात करहु गुन गानहिं॥
सनकादिक नारदहि सराहहिं। जद्यपि ब्रह्म निरत मुनि आहहिं॥
सुनि गुन गान समाधि बिसारी॥ सादर सुनहिं परम अधिकारी॥

दो. जीवनमुक्त ब्रह्मपर चरित सुनहिं तजि ध्यान।
जे हरि कथाँ न करहिं रति तिन्ह के हिय पाषान॥ ४२॥

एक बार रघुनाथ बोला। गुर द्विज पुरबासी सब आ॥
बैठे गुर मुनि अरु द्विज सज्जन। बोले बचन भगत भव भंजन॥
सनहु सकल पुरजन मम बानी। कहउँ न कछु ममता उर आनी॥
नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुता। सुनहु करहु जो तुम्हहि सोहा॥
सो सेवक प्रियतम मम सो। मम अनुसासन मानै जो॥
जौं अनीति कछु भाषौं भा। तौं मोहि बरजहु भय बिसरा॥

बड़ें भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथिन्ह गावा॥
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पा न जेहिं परलोक सँवारा॥

दो. सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिता।
कालहि कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोष लगा॥ ४३॥

एहि तन कर फल बिषय न भा। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदा॥
नर तनु पा बिषयँ मन देहीं। पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं॥
ताहि कबहुँ भल कहइ न को। गुंजा ग्रहइ परस मनि खो॥
आकर चारि लच्छ चौरासी। जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी॥
फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा॥
कबहुँक करि करुना नर देही। देत ईस बिनु हेतु सनेही॥
नर तनु भव बारिधि कहुँ बेरो। सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो॥
करनधार सदगुर दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ करि पावा॥

दो. जो न तरै भव सागर नर समाज अस पा।
सो कृत निंदक मंदमति आत्माहन गति जा॥ ४४॥

जौं परलोक इहाँ सुख चहहू। सुनि मम बचन हृदयँ दृढ़ गहहू॥

सुलभ सुखद मारग यह भा। भगति मोरि पुरान श्रुति गा॥
ग्यान अगम प्रत्यूह अनेका। साधन कठिन न मन कहुँ टेका॥
करत कष्ट बहु पावइ को। भक्ति हीन मोहि प्रिय नहिं सो॥
भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी॥
पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता। सतसंगति संसृति कर अंता॥
पुन्य एक जग महुँ नहिं दूजा। मन क्रम बचन बिप्र पद पूजा॥

सानुकूल तेहि पर मुनि देवा। जो तजि कपटु करइ द्विज सेवा॥

दो. औरउ एक गुपुत मत सबहि कहउँ कर जोरि।
संकर भजन बिना नर भगति न पावइ मोरि॥ ४५॥

कहहु भगति पथ कवन प्रयासा। जोग न मख जप तप उपवासा॥
सरल सुभाव न मन कुटिला। जथा लाभ संतोष सदा॥
मोर दास कहा नर आसा। करइ तौ कहहु कहा बिस्वासा॥
बहुत कहउँ का कथा बढ़ा। एहि आचरन बस्य मैं भा॥
बैर न बिग्रह आस न त्रासा। सुखमय ताहि सदा सब आसा॥
अनारंभ अनिकेत अमानी। अनघ अरोष दच्छ बिग्यानी॥
प्रीति सदा सज्जन संसर्गा। तृन सम बिषय स्वर्ग अपबर्गा॥

भगति पच्छ हठ नहिं सठता। दुष्ट तर्क सब दूरि बहा॥

दो. मम गुन ग्राम नाम रत गत ममता मद मोह।
ता कर सुख सो जानइ परानंद संदोह॥ ४६॥

सुनत सुधासम बचन राम के। गहे सबनि पद कृपाधाम के॥
जननि जनक गुर बंधु हमारे। कृपा निधान प्रान ते प्यारे॥
तनु धनु धाम राम हितकारी। सब बिधि तुम्ह प्रनतारति हारी॥
असि सिख तुम्ह बिनु दे न को। मातु पिता स्वारथ रत ओ॥
हेतु रहित जग जुग उपकारी। तुम्ह तुम्हार सेवक असुरारी॥
स्वारथ मीत सकल जग माहीं। सपनेहुँ प्रभु परमारथ नाहीं॥
सबके बचन प्रेम रस साने। सुनि रघुनाथ हृदयँ हरषाने॥
निज निज गृह ग आयसु पा। बरनत प्रभु बतकही सुहा॥

दो. -उमा अवधबासी नर नारि कृतारथ रूप।
ब्रह्म सच्चिदानंद घन रघुनायक जहँ भूप॥ ४७॥

एक बार बसिष्ट मुनि आ। जहाँ राम सुखधाम सुहा॥
अति आदर रघुनायक कीन्हा। पद पखारि पादोदक लीन्हा॥

राम सुनहु मुनि कह कर जोरी। कृपासिंधु बिनती कछु मोरी॥
देखि देखि आचरन तुम्हारा। होत मोह मम हृदयँ अपारा॥
महिमा अमित बेद नहिं जाना। मैं केहि भाँति कहउँ भगवाना॥
उपरोहित्य कर्म अति मंदा। बेद पुरान सुमृति कर निंदा॥
जब न लेँ मैं तब बिधि मोही। कहा लाभ आगें सुत तोही॥
परमातमा ब्रह्म नर रूपा। होहि रघुकुल भूषन भूपा॥

दो. -तब मैं हृदयँ बिचारा जोग जग्य ब्रत दान।
जा कहुँ करि सो पैहउँ धर्म न एहि सम आन॥ ४८॥

जप तप नियम जोग निज धर्मा। श्रुति संभव नाना सुभ कर्मा॥
ग्यान दया दम तीरथ मज्जन। जहँ लगि धर्म कहत श्रुति सज्जन॥
आगम निगम पुरान अनेका। पढ़े सुने कर फल प्रभु एका॥
तब पद पंकज प्रीति निरंतर। सब साधन कर यह फल सुंदर॥
छूटइ मल कि मलहि के धोँ। घृत कि पाव को बारि बिलोँ॥
प्रेम भगति जल बिनु रघुरा। अभिंतर मल कबहुँ न जा॥
सो सर्बग्य तग्य सो पंडित। सो गुन गृह बिग्यान अखंडित॥
दच्छ सकल लच्छन जुत सो। जाकें पद सरोज रति हो॥

दो. नाथ एक बर मागउँ राम कृपा करि देहु।
जन्म जन्म प्रभु पद कमल कबहुँ घटै जनि नेहु॥ ४९॥

अस कहि मुनि बसिष्ट गृह आ। कृपासिंधु के मन अति भा॥
हनूमान भरतादिक भ्राता। संग लि सेवक सुखदाता॥
पुनि कृपाल पुर बाहेर ग। गज रथ तुरग मगावत भ॥
देखि कृपा करि सकल सराहे। दि उचित जिन्ह जिन्ह ते चाहे॥
हरन सकल श्रम प्रभु श्रम पा। ग जहाँ सीतल अवँरा॥
भरत दीन्ह निज बसन डसा। बैठे प्रभु सेवहिं सब भा॥
मारुतसुत तब मारूत कर। पुलक बपुष लोचन जल भर॥
हनूमान सम नहिं बड़भागी। नहिं को राम चरन अनुरागी॥
गिरिजा जासु प्रीति सेवका। बार बार प्रभु निज मुख गा॥

दो. तेहिं अवसर मुनि नारद आ करतल बीन।
गावन लगे राम कल कीरति सदा नबीन॥ ५०॥

मामवलोकय पंकज लोचन। कृपा बिलोकनि सोच बिमोचन॥
नील तामरस स्याम काम अरि। हृदय कंज मकरंद मधुप हरि॥
जातुधान बरूथ बल भंजन। मुनि सज्जन रंजन अघ गंजन॥

भूसुर ससि नव बृंद बलाहक। असरन सरन दीन जन गाहक॥
भुज बल बिपुल भार महि खंडित। खर दूषन बिराध बध पंडित॥
रावनारि सुखरूप भूपबर। जय दसरथ कुल कुमुद सुधाकर॥
सुजस पुरान बिदित निगमागम। गावत सुर मुनि संत समागम॥
कारुनीक ब्यलीक मद खंडन। सब बिधि कुसल कोसला मंडन॥
कलि मल मथन नाम ममताहन। तुलसीदास प्रभु पाहि प्रनत जन॥

दो. प्रेम सहित मुनि नारद बरनि राम गुन ग्राम।
सोभासिंधु हृदयँ धरि ग जहाँ बिधि धाम॥ ५१॥

गिरिजा सुनहु बिसद यह कथा। मैं सब कही मोरि मति जथा॥
राम चरित सत कोटि अपारा। श्रुति सारदा न बरनै पारा॥
राम अनंत अनंत गुनानी। जन्म कर्म अनंत नामानी॥
जल सीकर महि रज गनि जाहीं। रघुपति चरित न बरनि सिराहीं॥
बिमल कथा हरि पद दायनी। भगति हो सुनि अनपायनी॥
उमा कहिँ सब कथा सुहा। जो भुसुंडि खगपतिहि सुना॥
कछुक राम गुन कहेँ बखानी। अब का कहौं सो कहहु भवानी॥
सुनि सुभ कथा उमा हरषानी। बोली अति बिनीत मृदु बानी॥
धन्य धन्य मैं धन्य पुरारी। सुनेँ राम गुन भव भय हारी॥

दो. तुम्हरी कृपाँ कृपायतन अब कृतकृत्य न मोह।
जानैं राम प्रताप प्रभु चिदानंद संदोह॥ ५२क॥

नाथ तवानन ससि स्रवत कथा सुधा रघुबीर।
श्रवन पुटन्हि मन पान करि नहिं अघात मतिधीर॥ ५२ख॥

राम चरित जे सुनत अघाहीं। रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं॥
जीवनमुक्त महामुनि जे। हरि गुन सुनहीं निरंतर ते॥
भव सागर चह पार जो पावा। राम कथा ता कहँ दृढ़ नावा॥
बिषइन्ह कहँ पुनि हरि गुन ग्रामा। श्रवन सुखद अरु मन अभिरामा॥
श्रवनवंत अस को जग माहीं। जाहि न रघुपति चरित सोहाहीं॥
ते जड़ जीव निजात्मक घाती। जिन्हहि न रघुपति कथा सोहाती॥
हरिचरित्र मानस तुम्ह गावा। सुनि मैं नाथ अमिति सुख पावा॥
तुम्ह जो कही यह कथा सुहा। कागभसुंडि गरुड़ प्रति गा॥

दो. बिरति ग्यान बिग्यान दृढ़ राम चरन अति नेह।
बायस तन रघुपति भगति मोहि परम संदेह॥ ५३॥

नर सहस्र महँ सुनहु पुरारी। को एक हो धर्म ब्रतधारी॥
धर्मसील कोटिक महँ को। बिषय बिमुख बिराग रत हो॥
कोटि बिरक्त मध्य श्रुति कह। सम्यक ग्यान सकृत को लह॥
ग्यानवंत कोटिक महँ को। जीवनमुक्त सकृत जग सो॥
तिन्ह सहस्र महुँ सब सुख खानी। दुर्लभ ब्रह्मलीन बिग्यानी॥
धर्मसील बिरक्त अरु ग्यानी। जीवनमुक्त ब्रह्मपर प्रानी॥
सब ते सो दुर्लभ सुरराया। राम भगति रत गत मद माया॥
सो हरिभगति काग किमि पा। बिस्वनाथ मोहि कहहु बुझा॥

दो. राम परायन ग्यान रत गुनागार मति धीर।
नाथ कहहु केहि कारन पायउ काक सरीर॥ ५४॥

यह प्रभु चरित पवित्र सुहावा। कहहु कृपाल काग कहँ पावा॥
तुम्ह केहि भाँति सुना मदनारी। कहहु मोहि अति कौतुक भारी॥
गरुड़ महाग्यानी गुन रासी। हरि सेवक अति निकट निवासी॥
तेहिं केहि हेतु काग सन जा। सुनी कथा मुनि निकर बिहा॥
कहहु कवन बिधि भा संबादा। दो हरिभगत काग उरगादा॥
गौरि गिरा सुनि सरल सुहा। बोले सिव सादर सुख पा॥
धन्य सती पावन मति तोरी। रघुपति चरन प्रीति नहिं थोरी॥

सुनहु परम पुनीत इतिहासा। जो सुनि सकल लोक भ्रम नासा॥
उपजइ राम चरन बिस्वासा। भव निधि तर नर बिनहिं प्रयासा॥

दो. ऐसि प्रस्न बिहंगपति कीन्ह काग सन जा।
सो सब सादर कहिहउँ सुनहु उमा मन ला॥ ५५॥

मैं जिमि कथा सुनी भव मोचनि। सो प्रसंग सुनु सुमुखि सुलोचनि॥
प्रथम दच्छ गृह तव अवतारा। सती नाम तब रहा तुम्हारा॥
दच्छ जग्य तब भा अपमाना। तुम्ह अति क्रोध तजे तब प्राना॥
मम अनुचरन्ह कीन्ह मख भंगा। जानहु तुम्ह सो सकल प्रसंगा॥
तब अति सोच भयउ मन मोरें। दुखी भयउँ बियोग प्रिय तोरें॥
सुंदर बन गिरि सरित तड़ागा। कौतुक देखत फिरउँ बेरागा॥
गिरि सुमेर उत्तर दिसि दूरी। नील सैल एक सुन्दर भूरी॥
तासु कनकमय सिखर सुहा। चारि चारु मोरे मन भा॥
तिन्ह पर एक एक बिटप बिसाला। बट पीपर पाकरी रसाला॥
सैलोपरि सर सुंदर सोहा। मनि सोपान देखि मन मोहा॥

दो. -सीतल अमल मधुर जल जलज बिपुल बहुरंग।
कूजत कल रव हंस गन गुंजत मजुंल भृंग॥ ५६॥

तेहिं गिरि रुचिर बसइ खग सो। तासु नास कल्पांत न हो॥
माया कृत गुन दोष अनेका। मोह मनोज आदि अबिबेका॥
रहे ब्यापि समस्त जग माहीं। तेहि गिरि निकट कबहुँ नहिं जाहीं॥
तहँ बसि हरिहि भजइ जिमि कागा। सो सुनु उमा सहित अनुरागा॥
पीपर तरु तर ध्यान सो धर। जाप जग्य पाकरि तर कर॥
आँब छाहँ कर मानस पूजा। तजि हरि भजनु काजु नहिं दूजा॥
बर तर कह हरि कथा प्रसंगा। आवहिं सुनहिं अनेक बिहंगा॥
राम चरित बिचीत्र बिधि नाना। प्रेम सहित कर सादर गाना॥
सुनहिं सकल मति बिमल मराला। बसहिं निरंतर जे तेहिं ताला॥
जब मैं जा सो कौतुक देखा। उर उपजा आनंद बिसेषा॥

दो. तब कछु काल मराल तनु धरि तहँ कीन्ह निवास।
सादर सुनि रघुपति गुन पुनि आयउँ कैलास॥ ५७॥

गिरिजा कहैं सो सब इतिहासा। मैं जेहि समय गयउँ खग पासा॥
अब सो कथा सुनहु जेही हेतू। गयउ काग पहिं खग कुल केतू॥
जब रघुनाथ कीन्हि रन क्रीड़ा। समुझत चरित होति मोहि ब्रीड़ा॥
इंद्रजीत कर आपु बँधायो। तब नारद मुनि गरुड़ पठायो॥

बंधन काटि गयो उरगादा। उपजा हृदयँ प्रचंड बिषादा॥
प्रभु बंधन समुझत बहु भाँती। करत बिचार उरग आराती॥
ब्यापक ब्रह्म बिरज बागीसा। माया मोह पार परमीसा॥
सो अवतार सुनैं जग माहीं। देखैं सो प्रभाव कछु नाहीं॥

दो. -भव बंधन ते छूटहिं नर जपि जा कर नाम।
खर्च निसाचर बाँधे नागपास सो राम॥ ५८॥

नाना भाँति मनहि समुझावा। प्रगट न ग्यान हृदयँ भ्रम छावा॥
खेद खिन्न मन तर्क बढ़ा। भयउ मोहबस तुम्हरिहिं ना॥
ब्याकुल गयउ देवरिषि पाहीं। कहेसि जो संसय निज मन माहीं॥
सुनि नारदहि लागि अति दाया। सुनु खग प्रबल राम कै माया॥
जो ग्यानिन्ह कर चित अपहर। बरिआ बिमोह मन कर॥
जेहिं बहु बार नचावा मोही। सो ब्यापी बिहंगपति तोही॥
महामोह उपजा उर तोरें। मिटिहि न बेगि कहें खग मोरें॥
चतुरानन पहिं जाहु खगेसा। सो करेहु जेहि हो निदेसा॥

दो. अस कहि चले देवरिषि करत राम गुन गान।
हरि माया बल बरनत पुनि पुनि परम सुजान॥ ५९॥

तब खगपति बिरंचि पहिं गय। निज संदेह सुनावत भय॥
सुनि बिरंचि रामहि सिरु नावा। समुझि प्रताप प्रेम अति छावा॥
मन महुँ करइ बिचार बिधाता। माया बस कबि कोबिद ग्याता॥
हरि माया कर अमिति प्रभावा। बिपुल बार जेहिं मोहि नचावा॥
अग जगमय जग मम उपराजा। नहिं आचरज मोह खगराजा॥
तब बोले बिधि गिरा सुहा। जान महेस राम प्रभुता॥
बैनतेय संकर पहिं जाहू। तात अनत पूछहु जनि काहू॥
तहँ होहि तव संसय हानी। चले बिहंग सुनत बिधि बानी॥

दो. परमातुर बिहंगपति आयउ तब मो पास।
जात रहैं कुबेर गृह रहिहु उमा कैलास॥ ६०॥

तेहिं मम पद सादर सिरु नावा। पुनि आपन संदेह सुनावा॥
सुनि ता करि बिनती मृदु बानी। परेम सहित मैं कहैं भवानी॥
मिलेहु गरुड़ मारग महँ मोही। कवन भाँति समुझावौं तोही॥
तबहि हो सब संसय भंगा। जब बहु काल करि सतसंगा॥
सुनि तहाँ हरि कथा सुहा। नाना भाँति मुनिन्ह जो गा॥
जेहि महुँ आदि मध्य अवसाना। प्रभु प्रतिपाद्य राम भगवाना॥

नित हरि कथा होत जहँ भा। पठवउँ तहाँ सुनहि तुम्ह जा॥
जाहि सुनत सकल संदेहा। राम चरन होहि अति नेहा॥

दो. बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गँ बिनु राम पद हो न दृढ़ अनुराग॥ ६१॥

मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा। किँ जोग तप ग्यान बिरागा॥
उत्तर दिसि सुंदर गिरि नीला। तहँ रह काकभुसुंडि सुसीला॥
राम भगति पथ परम प्रबीना। ग्यानी गुन गृह बहु कालीना॥
राम कथा सो कहइ निरंतर। सादर सुनहिं बिबिध बिहंगबर॥
जा सुनहु तहँ हरि गुन भूरी। होहि मोह जनित दुख दूरी॥
मैं जब तेहि सब कहा बुझा। चले हरषि मम पद सिरु ना॥
ताते उमा न मैं समुझावा। रघुपति कृपाँ मरमु मैं पावा॥
होहि कीन्ह कबहुँ अभिमाना। सो खौवै चह कृपानिधाना॥
कछु तेहि ते पुनि मैं नहिं राखा। समुझइ खग खगही कै भाषा॥
प्रभु माया बलवंत भवानी। जाहि न मोह कवन अस ग्यानी॥

दो. ग्यानि भगत सिरोमनि त्रिभुवनपति कर जान।
ताहि मोह माया नर पावँर करहिं गुमान॥ ६२क॥

मासपारायण अट्ठासवाँ विश्राम

सिव बिरंचि कहुँ मोहइ को है बपुरा आन।
अस जियँ जानि भजहिं मुनि माया पति भगवान॥ ६२ख॥

गयउ गरुड़ जहँ बसइ भुसुंडा। मति अकुंठ हरि भगति अखंडा॥
देखि सैल प्रसन्न मन भय। माया मोह सोच सब गय॥
करि तड़ाग मज्जन जलपाना। बट तर गयउ हृदयँ हरषाना॥
बृद्ध बृद्ध बिहंग तहँ आ। सुनै राम के चरित सुहा॥
कथा अरंभ करै सो चाहा। तेही समय गयउ खगनाहा॥
आवत देखि सकल खगराजा। हरषे बायस सहित समाजा॥
अति आदर खगपति कर कीन्हा। स्वागत पूछि सुआसन दीन्हा॥
करि पूजा समेत अनुरागा। मधुर बचन तब बोले कागा॥

दो. नाथ कृतारथ भयउँ मैं तव दरसन खगराज।
आयसु देहु सो करौं अब प्रभु आयहु केहि काज॥ ६३क॥

सदा कृतारथ रूप तुम्ह कह मृदु बचन खगेस।
जेहि कै अस्तुति सादर निज मुख कीन्हि महेस॥ ६३ख॥

सुनहु तात जेहि कारन आयउँ। सो सब भयउ दरस तव पायउँ॥
देखि परम पावन तव आश्रम। गयउ मोह संसय नाना भ्रम॥
अब श्रीराम कथा अति पावनि। सदा सुखद दुख पुंज नसावनि॥
सादर तात सुनावहु मोही। बार बार बिनवउँ प्रभु तोही॥
सुनत गरुड़ कै गिरा बिनीता। सरल सुप्रेम सुखद सुपुनीता॥
भयउ तासु मन परम उछाहा। लाग कहै रघुपति गुन गाहा॥
प्रथमहिं अति अनुराग भवानी। रामचरित सर कहेसि बखानी॥
पुनि नारद कर मोह अपारा। कहेसि बहुरि रावन अवतारा॥
प्रभु अवतार कथा पुनि गा। तब सिसु चरित कहेसि मन ला॥

दो. बालचरित कहिं बिबिध बिधि मन महँ परम उछाह।
रिषि आगवन कहेसि पुनि श्री रघुबीर बिबाह॥ ६४॥

बहुरि राम अभिषेक प्रसंगा। पुनि नृप बचन राज रस भंगा॥
पुरबासिन्ह कर बिरह बिषादा। कहेसि राम लछिमन संबादा॥
बिपिन गवन केवट अनुरागा। सुरसरि उतरि निवास प्रयागा॥
बालमीक प्रभु मिलन बखाना। चित्रकूट जिमि बसे भगवाना॥
सचिवागवन नगर नृप मरना। भरतागवन प्रेम बहु बरना॥

करि नृप क्रिया संग पुरबासी। भरत ग जहँ प्रभु सुख रासी॥
पुनि रघुपति बहु बिधि समुझा। लै पादुका अवधपुर आ॥
भरत रहनि सुरपति सुत करनी। प्रभु अरु अत्रि भेंट पुनि बरनी॥

दो. कहि बिराध बध जेहि बिधि देह तजी सरभंग॥
बरनि सुतीछन प्रीति पुनि प्रभु अगस्ति सतसंग॥ ६५॥

कहि दंडक बन पावनता। गीध मइत्री पुनि तेहिं गा॥
पुनि प्रभु पंचवटीं कृत बासा। भंजी सकल मुनिन्ह की त्रासा॥
पुनि लछिमन उपदेस अनूपा। सूपनखा जिमि कीन्हि कुरूपा॥
खर दूषन बध बहुरि बखाना। जिमि सब मरमु दसानन जाना॥
दसकंधर मारीच बतकहीं। जेहि बिधि भ सो सब तेहिं कही॥
पुनि माया सीता कर हरना। श्रीरघुबीर बिरह कछु बरना॥
पुनि प्रभु गीध क्रिया जिमि कीन्ही। बधि कबंध सबरिहि गति दीन्ही॥
बहुरि बिरह बरनत रघुबीरा। जेहि बिधि ग सरोबर तीरा॥

दो. प्रभु नारद संबाद कहि मारुति मिलन प्रसंग।
पुनि सुग्रीव मिता बालि प्रान कर भंग॥ ६६क॥

कपिहि तिलक करि प्रभु कृत सैल प्रबरषन बास ।
बरनन बर्षा सरद अरु राम रोष कपि त्रास ॥ ६६ख ॥

जेहि बिधि कपिपति कीस पठा । सीता खोज सकल दिसि धा ॥
बिबर प्रबेस कीन्ह जेहि भाँती । कपिन्ह बहोरि मिला संपाती ॥
सुनि सब कथा समीरकुमारा । नाघत भयउ पयोधि अपारा ॥
लंकाँ कपि प्रबेस जिमि कीन्हा । पुनि सीतहि धीरजु जिमि दीन्हा ॥
बन उजारि रावनहि प्रबोधी । पुर दहि नाघे बहुरि पयोधी ॥
आ कपि सब जहँ रघुरा । बैदेही कि कुसल सुना ॥
सेन समेति जथा रघुबीरा । उतरे जा बारिनिधि तीरा ॥
मिला बिभीषन जेहि बिधि आ । सागर निग्रह कथा सुना ॥

दो. सेतु बाँधि कपि सेन जिमि उतरी सागर पार ।
गयउ बसीठी बीरबर जेहि बिधि बालिकुमार ॥ ६७क ॥

निसिचर कीस लरा बरनिसि बिबिध प्रकार ।
कुंभकरन घननाद कर बल पौरुष संघार ॥ ६७ख ॥

निसिचर निकर मरन बिधि नाना । रघुपति रावन समर बखाना ॥

रावन बध मंदोदरि सोका। राज बिभीषण देव असोका॥
सीता रघुपति मिलन बहोरी। सुरन्ह कीन्ह अस्तुति कर जोरी॥
पुनि पुष्पक चढ़ि कपिन्ह समेता। अवध चले प्रभु कृपा निकेता॥
जेहि बिधि राम नगर निज आ। बायस बिसद चरित सब गा॥
कहेसि बहोरि राम अभिषेका। पुर बरनत नृपनीति अनेका॥
कथा समस्त भुसुंड बखानी। जो मैं तुम्ह सन कही भवानी॥
सुनि सब राम कथा खगनाहा। कहत बचन मन परम उछाहा॥

सो. गयउ मोर संदेह सुनेँ सकल रघुपति चरित।
भयउ राम पद नेह तव प्रसाद बायस तिलक॥ ६८क॥

मोहि भयउ अति मोह प्रभु बंधन रन महुँ निरखि।
चिदानंद संदोह राम बिकल कारन कवन। ६८ख॥

देखि चरित अति नर अनुसारी। भयउ हृदयँ मम संसय भारी॥
सो भ्रम अब हित करि मैं माना। कीन्ह अनुग्रह कृपानिधाना॥
जो अति आतप ब्याकुल हो। तरु छाया सुख जानइ सो॥
जौं नहिं होत मोह अति मोही। मिलतेँ तात कवन बिधि तोही॥
सुनतेँ किमि हरि कथा सुहा। अति बिचित्र बहु बिधि तुम्ह गा॥

निगमागम पुरान मत एहा। कहहिं सिद्ध मुनि नहिं संदेहा॥
संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही। चितवहिं राम कृपा करि जेही॥
राम कृपाँ तव दरसन भय। तव प्रसाद सब संसय गय॥

दो. सुनि बिहंगपति बानी सहित बिनय अनुराग।
पुलक गात लोचन सजल मन हरषे अति काग॥ ६९क॥

श्रोता सुमति सुसील सुचि कथा रसिक हरि दास।
पा उमा अति गोप्यमपि सज्जन करहिं प्रकास॥ ६९ख॥

बोले काकभसुंड बहोरी। नभग नाथ पर प्रीति न थोरी॥
सब बिधि नाथ पूज्य तुम्ह मेरे। कृपापात्र रघुनायक केरे॥
तुम्हहि न संसय मोह न माया। मो पर नाथ कीन्ह तुम्ह दाया॥
पठइ मोह मिस खगपति तोही। रघुपति दीन्हि बड़ा मोही॥
तुम्ह निज मोह कही खग सां। सो नहिं कछु आचरज गोसां॥
नारद भव बिरंचि सनकादी। जे मुनिनायक आतमबादी॥
मोह न अंध कीन्ह केहि केही। को जग काम नचाव न जेही॥
तृस्नाँ केहि न कीन्ह बौराहा। केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा॥

दो. ग्यानी तापस सूर कबि कोबिद गुन आगार।
केहि कै लौभ बिडंबना कीन्हि न एहिं संसार॥ ७०क॥

श्री मद बक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि।
मृगलोचनि के नैन सर को अस लाग न जाहि॥ ७०ख॥

गुन कृत सन्यपात नहिं केही। को न मान मद तजे निबेही॥
जोबन ज्वर केहि नहिं बलकावा। ममता केहि कर जस न नसावा॥
मच्छर काहि कलंक न लावा। काहि न सोक समीर डोलावा॥
चिंता साँपिनि को नहिं खाया। को जग जाहि न ब्यापी माया॥
कीट मनोरथ दारु सरीरा। जेहि न लाग घुन को अस धीरा॥
सुत बित लोक ईषना तीनी। केहि के मति इन्ह कृत न मलीनी॥
यह सब माया कर परिवारा। प्रबल अमिति को बरनै पारा॥
सिव चतुरानन जाहि डेराहीं। अपर जीव केहि लेखे माहीं॥

दो. ब्यापि रहे संसार महुँ माया कटक प्रचंड॥
सेनापति कामादि भट दंभ कपट पाषंड॥ ७१क॥

सो दासी रघुबीर कै समुझें मिथ्या सोपि।

छूट न राम कृपा बिनु नाथ कहउँ पद रोपि ॥ ७१ख ॥

जो माया सब जगहि नचावा । जासु चरित लखि काहुँ न पावा ॥
सो प्रभु भ्रू बिलास खगराजा । नाच नटी इव सहित समाजा ॥
सो सच्चिदानंद घन रामा । अज बिग्यान रूपो बल धामा ॥
ब्यापक ब्याप्य अखंड अनंता । अखिल अमोघसक्ति भगवंता ॥
अगुन अदभ्र गिरा गोतीता । सबदरसी अनवद्य अजीता ॥
निर्मम निराकार निरमोहा । नित्य निरंजन सुख संदोहा ॥
प्रकृति पार प्रभु सब उर बासी । ब्रह्म निरीह बिरज अबिनासी ॥
इहाँ मोह कर कारन नाहीं । रबि सन्मुख तम कबहुँ कि जाहीं ॥

दो. भगत हेतु भगवान प्रभु राम धरे तनु भूप ।
कि चरित पावन परम प्राकृत नर अनुरूप ॥ ७२क ॥

जथा अनेक बेष धरि नृत्य करइ नट को ।
सो सो भाव देखावइ आपुन हो न सो ॥ ७२ख ॥

असि रघुपति लीला उरगारी । दनुज बिमोहनि जन सुखकारी ॥
जे मति मलिन बिषयबस कामी । प्रभु मोह धरहिं इमि स्वामी ॥

नयन दोष जा कहँ जब हो। पीत बरन ससि कहुँ कह सो॥
जब जेहि दिसि भ्रम हो खगेसा। सो कह पच्छिम उयउ दिनेसा॥
नौकारूढ़ चलत जग देखा। अचल मोह बस आपुहि लेखा॥
बालक भ्रमहिं न भ्रमहिं गृहादीं। कहहिं परस्पर मिथ्याबादी॥
हरि बिषइक अस मोह बिहंगा। सपनेहुँ नहिं अग्यान प्रसंगा॥
मायाबस मतिमंद अभागी। हृदयँ जमनिका बहुबिधि लागी॥
ते सठ हठ बस संसय करहीं। निज अग्यान राम पर धरहीं॥

दो. काम क्रोध मद लोभ रत गृहासक्त दुखरूप।
ते किमि जानहिं रघुपतिहि मूढ़ परे तम कूप॥ ७३क॥

निर्गुन रूप सुलभ अति सगुन जान नहिं को।
सुगम अगम नाना चरित सुनि मुनि मन भ्रम हो॥ ७३ख॥

सुनु खगेस रघुपति प्रभुता। कहउँ जथामति कथा सुहा॥
जेहि बिधि मोह भयउ प्रभु मोही। सो सब कथा सुनावउँ तोही॥
राम कृपा भाजन तुम्ह ताता। हरि गुन प्रीति मोहि सुखदाता॥
ताते नहिं कछु तुम्हहिं दुरावउँ। परम रहस्य मनोहर गावउँ॥
सुनहु राम कर सहज सुभा। जन अभिमान न राखहिं का॥

संसृत मूल सूलप्रद नाना। सकल सोक दायक अभिमाना॥
ताते करहिं कृपानिधि दूरी। सेवक पर ममता अति भूरी॥
जिमि सिसु तन ब्रन हो गोसा। मातु चिराव कठिन की नां॥

दो. जदपि प्रथम दुख पावइ रोवइ बाल अधीर।
ब्याधि नास हित जननी गनति न सो सिसु पीर॥ ७४क॥

तिमि रघुपति निज दासकर हरहिं मान हित लागि।
तुलसिदास ऐसे प्रभुहि कस न भजहु भ्रम त्यागि॥ ७४ख॥

राम कृपा आपनि जड़ता। कहउँ खगेस सुनहु मन ला॥
जब जब राम मनुज तनु धरहीं। भक्त हेतु लील बहु करहीं॥
तब तब अवधपुरी मैं ज़ाँ। बालचरित बिलोकि हरषाँ॥
जन्म महोत्सव देखउँ जा। बरष पाँच तहँ रहउँ लोभा॥
इष्टदेव मम बालक रामा। सोभा बपुष कोटि सत कामा॥
निज प्रभु बदन निहारि निहारी। लोचन सुफल करउँ उरगारी॥
लघु बायस बपु धरि हरि संगा। देखउँ बालचरित बहुरंगा॥

दो. लरिकां जहँ जहँ फिरहिं तहँ तहँ संग उड़ाँ।

जूठनि परइ अजिर महँ सो उठा करि खाँ ॥ ७५क ॥

एक बार अतिसय सब चरित कि रघुबीर ।
सुमिरत प्रभु लीला सो पुलकित भयउ सरीर ॥ ७५ख ॥

कहइ भसुंड सुनहु खगनायक । रामचरित सेवक सुखदायक ॥
नृपमंदिर सुंदर सब भाँती । खचित कनक मनि नाना जाती ॥
बरनि न जा रुचिर अँगना । जहँ खेलहिं नित चारि भा ॥
बालबिनोद करत रघुरा । बिचरत अजिर जननि सुखदा ॥
मरकत मृदुल कलेवर स्यामा । अंग अंग प्रति छबि बहु कामा ॥
नव राजीव अरुन मृदु चरना । पदज रुचिर नख ससि दुति हरना ॥
ललित अंक कुलिसादिक चारी । नूपुर चारू मधुर रवकारी ॥
चारु पुरट मनि रचित बना । कटि किंकिन कल मुखर सुहा ॥

दो. रेखा त्रय सुन्दर उदर नाभी रुचिर गँभीर ।
उर आयत भ्राजत बिबिध बाल बिभूषन चीर ॥ ७६ ॥

अरुन पानि नख करज मनोहर । बाहु बिसाल बिभूषन सुंदर ॥
कंध बाल केहरि दर ग्रीवा । चारु चिबुक आनन छबि सींवा ॥

कलबल बचन अधर अरुनारे। दु दु दसन बिसद बर बारे॥
ललित कपोल मनोहर नासा। सकल सुखद ससि कर सम हासा॥
नील कंज लोचन भव मोचन। भ्राजत भाल तिलक गोरोचन॥
बिकट भृकुटि सम श्रवन सुहा। कुंचित कच मेचक छबि छा॥
पीत झीनि झगुली तन सोही। किलकनि चितवनि भावति मोही॥
रूप रासि नृप अजिर बिहारी। नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी॥
मोहि सन करहीं बिबिध बिधि क्रीड़ा। बरनत मोहि होति अति ब्रीड़ा॥
किलकत मोहि धरन जब धावहिं। चलउँ भागि तब पूप देखावहिं॥

दो. आवत निकट हँसहिं प्रभु भाजत रुदन कराहिं।
जाँ समीप गहन पद फिरि फिरि चितइ पराहिं॥ ७७क॥

प्राकृत सिसु इव लीला देखि भयउ मोहि मोह।
कवन चरित्र करत प्रभु चिदानंद संदोह॥ ७७ख॥

एतना मन आनत खगराया। रघुपति प्रेरित ब्यापी माया॥
सो माया न दुखद मोहि काहीं। आन जीव इव संसृत नाहीं॥
नाथ इहाँ कछु कारन आना। सुनहु सो सावधान हरिजाना॥
ग्यान अखंड एक सीताबर। माया बस्य जीव सचराचर॥

जौं सब कें रह ग्यान एकरस। ईस्वर जीवहि भेद कहहु कस॥
माया बस्य जीव अभिमानी। ईस बस्य माया गुनखानी॥
परबस जीव स्वबस भगवंता। जीव अनेक एक श्रीकंता॥
मुधा भेद जद्यपि कृत माया। बिनु हरि जा न कोटि उपाया॥

दो. रामचंद्र के भजन बिनु जो चह पद निर्बान।
ग्यानवंत अपि सो नर पसु बिनु पूँछ बिषान॥ ७८क॥

राकापति षोड़स उहिं तारागन समुदा॥
सकल गिरिन्ह दव ला बिनु रबि राति न जा॥ ७८ख॥

ऐसेहिं हरि बिनु भजन खगेसा। मिटइ न जीवन्ह केर कलेसा॥
हरि सेवकहि न ब्याप अबिद्या। प्रभु प्रेरित ब्यापइ तेहि बिद्या॥
ताते नास न हो दास कर। भेद भगति भाढ़इ बिहंगबर॥
भ्रम ते चकित राम मोहि देखा। बिहँसे सो सुनु चरित बिसेषा॥
तेहि कौतुक कर मरमु न काहूँ। जाना अनुज न मातु पिताहूँ॥
जानु पानि धा मोहि धरना। स्यामल गात अरुन कर चरना॥
तब मैं भागि चलेँ उरगामी। राम गहन कहँ भुजा पसारी॥
जिमि जिमि दूरि उड़ाँ अकासा। तहँ भुज हरि देखउँ निज पासा॥

दो. ब्रह्मलोक लगि गयउँ मैं चितयउँ पाछ उड़ात।
जुग अंगुल कर बीच सब राम भुजहि मोहि तात॥ ७९क॥

सप्ताबरन भेद करि जहाँ लगें गति मोरि।
गयउँ तहाँ प्रभु भुज निरखि ब्याकुल भयउँ बहोरि॥ ७९ख॥

मूदेँ नयन त्रसित जब भयउँ। पुनि चितवत कोसलपुर गयँ॥
मोहि बिलोकि राम मुसुकाहीं। बिहँसत तुरत गयउँ मुख माहीं॥
उदर माझ सुनु अंडज राया। देखेँ बहु ब्रह्मांड निकाया॥
अति बिचित्र तहँ लोक अनेका। रचना अधिक एक ते एका॥
कोटिन्ह चतुरानन गौरीसा। अगनित उडगन रबि रजनीसा॥
अगनित लोकपाल जम काला। अगनित भूधर भूमि बिसाला॥
सागर सरि सर बिपिन अपारा। नाना भाँति सृष्टि बिस्तारा॥
सुर मुनि सिद्ध नाग नर किंनर। चारि प्रकार जीव सचराचर॥

दो. जो नहिं देखा नहिं सुना जो मनहूँ न समा।
सो सब अद्भुत देखेँ बरनि कवनि बिधि जा॥ ८०क॥

एक एक ब्रह्मांड महुँ रहउँ बरष सत एक।
एहि बिधि देखत फिरउँ मैं अंड कटाह अनेक॥ ८०ख॥

एहि बिधि देखत फिरउँ मैं अंड कटाह अनेक॥ ८०ख॥

लोक लोक प्रति भिन्न बिधाता। भिन्न बिष्नु सिव मनु दिसित्राता॥
नर गंधर्ब भूत बेताला। किंनर निसिचर पसु खग ब्याला॥
देव दनुज गन नाना जाती। सकल जीव तहँ आनहि भाँती॥
महि सरि सागर सर गिरि नाना। सब प्रपंच तहँ आनइ आना॥
अंडकोस प्रति प्रति निज रुपा। देखैं जिनस अनेक अनूपा॥
अवधपुरी प्रति भुवन निनारी। सरजू भिन्न भिन्न नर नारी॥
दसरथ कौसल्या सुनु ताता। बिबिध रूप भरतादिक भ्राता॥
प्रति ब्रह्मांड राम अवतारा। देखउँ बालबिनोद अपारा॥

दो. भिन्न भिन्न मै दीख सबु अति बिचित्र हरिजान।
अगनित भुवन फिरैं प्रभु राम न देखैं आन॥ ८१क॥

सो सिसुपन सो सोभा सो कृपाल रघुबीर।
भुवन भुवन देखत फिरउँ प्रेरित मोह समीर॥ ८१ख

भ्रमत मोहि ब्रह्मांड अनेका। बीते मनहुँ कल्प सत एका॥
फिरत फिरत निज आश्रम आयउँ। तहँ पुनि रहि कछु काल गवाँयउँ॥
निज प्रभु जन्म अवध सुनि पायउँ। निर्भर प्रेम हरषि उठि धायउँ॥
देखउँ जन्म महोत्सव जा। जेहि बिधि प्रथम कहा मैं गा॥
राम उदर देखैं जग नाना। देखत बनइ न जा बखाना॥
तहँ पुनि देखैं राम सुजाना। माया पति कृपाल भगवाना॥
करउँ बिचार बहोरि बहोरी। मोह कलिल ब्यापित मति मोरी॥
उभय घरी महँ मैं सब देखा। भयउँ भ्रमित मन मोह बिसेषा॥

दो. देखि कृपाल बिकल मोहि बिहँसे तब रघुबीर।
बिहँसतहीं मुख बाहेर आयउँ सुनु मतिधीर॥ ८२क॥

सो लरिका मो सन करन लगे पुनि राम।
कोटि भाँति समुझावउँ मनु न लहइ बिश्राम॥ ८२ख॥

देखि चरित यह सो प्रभुता। समुझत देह दसा बिसरा॥
धरनि परैं मुख आव न बाता। त्राहि त्राहि आरत जन त्राता॥
प्रेमाकुल प्रभु मोहि बिलोकी। निज माया प्रभुता तब रोकी॥

कर सरोज प्रभु मम सिर धरे। दीनदयाल सकल दुख हरे॥
कीन्ह राम मोहि बिगत बिमोहा। सेवक सुखद कृपा संदोहा॥
प्रभुता प्रथम बिचारि बिचारी। मन महँ हो हरष अति भारी॥
भगत बछलता प्रभु कै देखी। उपजी मम उर प्रीति बिसेषी॥
सजल नयन पुलकित कर जोरी। कीन्हिँ बहु बिधि बिनय बहोरी॥

दो. सुनि सप्रेम मम बानी देखि दीन निज दास।
बचन सुखद गंभीर मृदु बोले रमानिवास॥ ८३क॥

काकभसुंडि मागु बर अति प्रसन्न मोहि जानि।
अनिमादिक सिधि अपर रिधि मोच्छ सकल सुख खानि॥ ८३ख॥

ग्यान बिबेक बिरति बिग्याना। मुनि दुर्लभ गुन जे जग नाना॥
आजु दैं सब संसय नाहीं। मागु जो तोहि भाव मन माहीं॥
सुनि प्रभु बचन अधिक अनुरागेँ। मन अनुमान करन तब लागेँ॥
प्रभु कह देन सकल सुख सही। भगति आपनी देन न कही॥
भगति हीन गुन सब सुख ऐसे। लवन बिना बहु बिंजन जैसे॥
भजन हीन सुख कवने काजा। अस बिचारि बोलेँ खगराजा॥
जौं प्रभु हो प्रसन्न बर देहू। मो पर करहु कृपा अरु नेहू॥

मन भावत बर मागउँ स्वामी। तुम्ह उदार उर अंतरजामी॥

दो. अबिरल भगति बिसुध्द तव श्रुति पुरान जो गाव।
जेहि खोजत जोगीस मुनि प्रभु प्रसाद को पाव॥ ८४क॥

भगत कल्पतरु प्रनत हित कृपा सिंधु सुख धाम।
सो निज भगति मोहि प्रभु देहु दया करि राम॥ ८४ख॥

एवमस्तु कहि रघुकुलनायक। बोले बचन परम सुखदायक॥
सुनु बायस तैं सहज सयाना। काहे न मागसि अस बरदाना॥

सब सुख खानि भगति तैं मागी। नहिं जग को तोहि सम बड़भागी॥
जो मुनि कोटि जतन नहिं लहहीं। जे जप जोग अनल तन दहहीं॥
रीझैं देखि तोरि चतुरा। मागेहु भगति मोहि अति भा॥
सुनु बिहंग प्रसाद अब मोरें। सब सुभ गुन बसिहहिं उर तोरें॥
भगति ग्यान बिग्यान बिरागा। जोग चरित्र रहस्य बिभागा॥
जानब तैं सबही कर भेदा। मम प्रसाद नहिं साधन खेदा॥

दों.माया संभव भ्रम सब अब न ब्यापिहहिं तोहि।

जानेसु ब्रह्म अनादि अज अगुन गुनाकर मोहि ॥ ८५क ॥

मोहि भगत प्रिय संतत अस बिचारि सुनु काग ।
कायँ बचन मन मम पद करेसु अचल अनुराग ॥ ८५ख ॥

अब सुनु परम बिमल मम बानी । सत्य सुगम निगमादि बखानी ॥
निज सिद्धांत सुनावउँ तोही । सुनु मन धरु सब तजि भजु मोही ॥
मम माया संभव संसारा । जीव चराचर बिबिधि प्रकारा ॥
सब मम प्रिय सब मम उपजा । सब ते अधिक मनुज मोहि भा ॥
तिन्ह महँ द्विज द्विज महँ श्रुतिधारी । तिन्ह महुँ निगम धरम अनुसारी ॥
तिन्ह महँ प्रिय बिरक्त पुनि ग्यानी । ग्यानिहु ते अति प्रिय बिग्यानी ॥
तिन्ह ते पुनि मोहि प्रिय निज दासा । जेहि गति मोरि न दूसरि आसा ॥
पुनि पुनि सत्य कहउँ तोहि पाहीं । मोहि सेवक सम प्रिय को नाहीं ॥
भगति हीन बिरंचि किन हो । सब जीवहु सम प्रिय मोहि सो ॥
भगतिवंत अति नीचउ प्रानी । मोहि प्रानप्रिय असि मम बानी ॥

दो. सुचि सुसील सेवक सुमति प्रिय कहु काहि न लाग ।
श्रुति पुरान कह नीति असि सावधान सुनु काग ॥ ८६ ॥

एक पिता के बिपुल कुमारा। होहिं पृथक गुन सील अचारा॥
को पंडित को तापस ग्याता। को धनवंत सूर को दाता॥
को सर्बग्य धर्मरत को। सब पर पितहि प्रीति सम हो॥
को पितु भगत बचन मन कर्मा। सपनेहुँ जान न दूसर धर्मा॥
सो सुत प्रिय पितु प्रान समाना। जद्यपि सो सब भाँति अयाना॥
एहि बिधि जीव चराचर जेते। त्रिजग देव नर असुर समेते॥
अखिल बिस्व यह मोर उपाया। सब पर मोहि बराबरि दाया॥
तिन्ह महँ जो परिहरि मद माया। भजै मोहि मन बच अरू काया॥

दो. पुरूष नपुंसक नारि वा जीव चराचर को।
सर्ब भाव भज कपट तजि मोहि परम प्रिय सो॥ ८७क॥

सो. सत्य कहउँ खग तोहि सुचि सेवक मम प्रानप्रिय।
अस बिचारि भजु मोहि परिहरि आस भरोस सब॥ ८७ख॥

कबहूँ काल न ब्यापिहि तोही। सुमिरेसु भजेसु निरंतर मोही॥
प्रभु बचनामृत सुनि न अघाँ। तनु पुलकित मन अति हरषाँ॥
सो सुख जानइ मन अरु काना। नहिं रसना पहिं जा बखाना॥
प्रभु सोभा सुख जानहिं नयना। कहि किमि सकहिं तिन्हहि नहिं बयना॥

बहु बिधि मोहि प्रबोधि सुख दे। लगे करन सिसु कौतुक ते॥
सजल नयन कछु मुख करि रूखा। चितइ मातु लागी अति भूखा॥
देखि मातु आतुर उठि धा। कहि मृदु बचन लि उर ला॥
गोद राखि कराव पय पाना। रघुपति चरित ललित कर गाना॥

सो. जेहि सुख लागि पुरारि असुभ बेष कृत सिव सुखद।
अवधपुरी नर नारि तेहि सुख महुँ संतत मगन॥ ८८क॥

सो सुख लवलेस जिन्ह बारक सपनेहुँ लहे।
ते नहिं गनहिं खगेस ब्रह्मसुखहि सज्जन सुमति॥ ८८ख॥

मैं पुनि अवध रहौं कछु काला। देखौं बालबिनोद रसाला॥
राम प्रसाद भगति बर पायउँ। प्रभु पद बंदि निजाश्रम आयउँ॥
तब ते मोहि न ब्यापी माया। जब ते रघुनायक अपनाया॥
यह सब गुप्त चरित मैं गावा। हरि मायाँ जिमि मोहि नचावा॥
निज अनुभव अब कहउँ खगेसा। बिनु हरि भजन न जाहि कलेसा॥
राम कृपा बिनु सुनु खगरा। जानि न जा राम प्रभुता॥
जानें बिनु न हो परतीती। बिनु परतीति हो नहिं प्रीती॥
प्रीति बिना नहिं भगति दिढ़ा। जिमि खगपति जल कै चिकना॥

सो. बिनु गुर हो कि ग्यान ग्यान कि हो बिराग बिनु।
गावहिं बेद पुरान सुख कि लहि हरि भगति बिनु॥ ८९क॥

को बिश्राम कि पाव तात सहज संतोष बिनु।
चलै कि जल बिनु नाव कोटि जतन पचि पचि मरि॥ ८९ख॥

बिनु संतोष न काम नसाहीं। काम अछत सुख सपनेहुँ नाहीं॥
राम भजन बिनु मिटहिं कि कामा। थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा॥
बिनु बिग्यान कि समता आवइ। को अवकास कि नभ बिनु पावइ॥
श्रद्धा बिना धर्म नहिं हो। बिनु महि गंध कि पावइ को॥
बिनु तप तेज कि कर बिस्तारा। जल बिनु रस कि हो संसारा॥
सील कि मिल बिनु बुध सेवका। जिमि बिनु तेज न रूप गोसा॥
निज सुख बिनु मन हो कि थीरा। परस कि हो बिहीन समीरा॥
कवनि सिद्धि कि बिनु बिस्वासा। बिनु हरि भजन न भव भय नासा॥

दो. बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहिं न रामु।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह बिश्रामु॥ ९०क॥

सो. अस बिचारि मतिधीर तजि कुतर्क संसय सकल।
भजहु राम रघुबीर करुनाकर सुंदर सुखद॥ ९०ख॥

निज मति सरिस नाथ मैं गा। प्रभु प्रताप महिमा खगरा॥
कहैं न कछु करि जुगुति बिसेषी। यह सब मैं निज नयनन्हि देखी॥
महिमा नाम रूप गुन गाथा। सकल अमित अनंत रघुनाथा॥
निज निज मति मुनि हरि गुन गावहिं। निगम सेष सिव पार न पावहिं॥
तुम्हहि आदि खग मसक प्रजंता। नभ उड़ाहिं नहिं पावहिं अंता॥
तिमि रघुपति महिमा अवगाहा। तात कबहुँ को पाव कि थाहा॥
रामु काम सत कोटि सुभग तन। दुर्गा कोटि अमित अरि मर्दन॥
सक्र कोटि सत सरिस बिलासा। नभ सत कोटि अमित अवकासा॥

दो. मरुत कोटि सत बिपुल बल रबि सत कोटि प्रकास।
ससि सत कोटि सुसीतल समन सकल भव त्रास॥ ९१क॥

काल कोटि सत सरिस अति दुस्तर दुर्ग दुरंत।
धूमकेतु सत कोटि सम दुराधरष भगवंत॥ ९१ख॥

प्रभु अगाध सत कोटि पताला। समन कोटि सत सरिस कराला॥

तीरथ अमित कोटि सम पावन। नाम अखिल अघ पूग नसावन॥
हिमगिरि कोटि अचल रघुबीरा। सिंधु कोटि सत सम गंभीरा॥
कामधेनु सत कोटि समाना। सकल काम दायक भगवाना॥
सारद कोटि अमित चतुरा। बिधि सत कोटि सृष्टि निपुना॥
बिष्नु कोटि सम पालन कर्ता। रुद्र कोटि सत सम संहर्ता॥
धनद कोटि सत सम धनवाना। माया कोटि प्रपंच निधाना॥
भार धरन सत कोटि अहीसा। निरवधि निरुपम प्रभु जगदीसा॥

छं. निरुपम न उपमा आन राम समान रामु निगम कहै।
जिमि कोटि सत खद्योत सम रबि कहत अति लघुता लहै॥
एहि भाँति निज निज मति बिलास मुनिस हरिहि बखानहीं।
प्रभु भाव गाहक अति कृपाल सप्रेम सुनि सुख मानहीं॥

दो. रामु अमित गुन सागर थाह कि पावइ को।
संतन्ह सन जस किछु सुनैं तुम्हहि सुनायउँ सो॥ ९२क॥

सो. भाव बस्य भगवान सुख निधान करुना भवन।
तजि ममता मद मान भजि सदा सीता रवन॥ ९२ख॥

सुनि भुसुंडि के बचन सुहा। हरषित खगपति पंख फुला॥
नयन नीर मन अति हरषाना। श्रीरघुपति प्रताप उर आना॥
पाछिल मोह समुझि पछिताना। ब्रह्म अनादि मनुज करि माना॥
पुनि पुनि काग चरन सिरु नावा। जानि राम सम प्रेम बढ़ावा॥
गुर बिनु भव निधि तरइ न को। जौं बिरंचि संकर सम हो॥
संसय सर्प ग्रसे मोहि ताता। दुखद लहरि कुतर्क बहु ब्राता॥
तव सरूप गारुड़ि रघुनायक। मोहि जिआयउ जन सुखदायक॥
तव प्रसाद मम मोह नसाना। राम रहस्य अनूपम जाना॥

दो. ताहि प्रसंसि बिबिध बिधि सीस ना कर जोरि।
बचन बिनीत सप्रेम मृदु बोले गरुड़ बहोरि॥ ९३क॥

प्रभु अपने अबिबेक ते बूझउँ स्वामी तोहि।
कृपासिंधु सादर कहहु जानि दास निज मोहि॥ ९३ख॥

तुम्ह सर्बग्य तन्य तम पारा। सुमति सुसील सरल आचारा॥
ग्यान बिरति बिग्यान निवासा। रघुनायक के तुम्ह प्रिय दासा॥
कारन कवन देह यह पा। तात सकल मोहि कहहु बुझा॥
राम चरित सर सुंदर स्वामी। पायहु कहाँ कहहु नभगामी॥

नाथ सुना मैं अस सिव पाहीं। महा प्रलयहुँ नास तव नाहीं॥
मुधा बचन नहिं ईस्वर कह। सो मोरें मन संसय अह॥
अग जग जीव नाग नर देवा। नाथ सकल जगु काल कलेवा॥
अंड कटाह अमित लय कारी। कालु सदा दुरतिक्रम भारी॥

सो. तुम्हहि न ब्यापत काल अति कराल कारन कवन।
मोहि सो कहहु कृपाल ग्यान प्रभाव कि जोग बल॥ ९४क॥

दो. प्रभु तव आश्रम आँ मोर मोह भ्रम भाग।
कारन कवन सो नाथ सब कहहु सहित अनुराग॥ ९४ख॥

गरुड़ गिरा सुनि हरषे कागा। बोले उमा परम अनुरागा॥
धन्य धन्य तव मति उरगारी। प्रस्न तुम्हारि मोहि अति प्यारी॥
सुनि तव प्रस्न सप्रेम सुहा। बहुत जनम कै सुधि मोहि आ॥
सब निज कथा कहउँ मैं गा। तात सुनहु सादर मन ला॥
जप तप मख सम दम ब्रत दाना। बिरति बिबेक जोग बिग्याना॥
सब कर फल रघुपति पद प्रेमा। तेहि बिनु को न पावइ छेमा॥
एहि तन राम भगति मैं पा। ताते मोहि ममता अधिका॥
जेहि तें कछु निज स्वारथ हो। तेहि पर ममता कर सब को॥

सो. पन्नगारि असि नीति श्रुति संमत सज्जन कहहिं।
अति नीचहु सन प्रीति करि जानि निज परम हित॥ ९५क॥

पाट कीट तें हो तेहि तें पाटंबर रुचिर।
कृमि पालइ सबु को परम अपावन प्रान सम॥ ९५ख॥

स्वारथ साँच जीव कहुँ एहा। मन क्रम बचन राम पद नेहा॥
सो पावन सो सुभग सरीरा। जो तनु पा भजि रघुबीरा॥
राम बिमुख लहि बिधि सम देही। कबि कोबिद न प्रसंसहिं तेही॥
राम भगति एहिं तन उर जामी। ताते मोहि परम प्रिय स्वामी॥
तजउँ न तन निज इच्छा मरना। तन बिनु बेद भजन नहिं बरना॥
प्रथम मोहँ मोहि बहुत बिगोवा। राम बिमुख सुख कबहुँ न सोवा॥
नाना जनम कर्म पुनि नाना। कि जोग जप तप मख दाना॥
कवन जोनि जनमैं जहँ नाहीं। मैं खगेस भ्रमि भ्रमि जग माहीं॥
देखैं करि सब करम गोसा। सुखी न भयउँ अबहिं की ना॥
सुधि मोहि नाथ जन्म बहु केरी। सिव प्रसाद मति मोहँ न घेरी॥

दो. प्रथम जन्म के चरित अब कहउँ सुनहु बिहगेस।

सुनि प्रभु पद रति उपजइ जातें मिटहिं कलेस ॥ ९६क ॥

पूरुब कल्प एक प्रभु जुग कलिजुग मल मूल ॥
नर अरु नारि अधर्म रत सकल निगम प्रतिकूल ॥ ९६ख ॥

तेहि कलिजुग कोसलपुर जा । जन्मत भयउँ सूद्र तनु पा ॥
सिव सेवक मन क्रम अरु बानी । आन देव निंदक अभिमानी ॥
धन मद मत्त परम बाचाला । उग्रबुद्धि उर दंभ बिसाला ॥
जदपि रहैं रघुपति रजधानी । तदपि न कछु महिमा तब जानी ॥
अब जाना मैं अवध प्रभावा । निगमागम पुरान अस गावा ॥
कवनेहुँ जन्म अवध बस जो । राम परायन सो परि हो ॥
अवध प्रभाव जान तब प्रानी । जब उर बसहिं रामु धनुपानी ॥
सो कलिकाल कठिन उरगारी । पाप परायन सब नर नारी ॥

दो. कलिमल ग्रसे धर्म सब लुप्त भ सदग्रंथ ।
दंभिन्ह निज मति कल्पि करि प्रगट कि बहु पंथ ॥ ९७क ॥

भ लोग सब मोहबस लोभ ग्रसे सुभ कर्म ।
सुनु हरिजान ग्यान निधि कहउँ कछुक कलिधर्म ॥ ९७ख ॥

बरन धर्म नहिं आश्रम चारी। श्रुति बिरोध रत सब नर नारी॥
द्विज श्रुति बेचक भूप प्रजासन। को नहिं मान निगम अनुसासन॥
मारग सो जा कहुँ जो भावा। पंडित सो जो गाल बजावा॥
मिथ्यारंभ दंभ रत जो। ता कहुँ संत कहइ सब को॥
सो सयान जो परधन हारी। जो कर दंभ सो बड़ आचारी॥
जौ कह झूँठ मसखरी जाना। कलिजुग सो गुनवंत बखाना॥
निराचार जो श्रुति पथ त्यागी। कलिजुग सो ग्यानी सो बिरागी॥
जाकें नख अरु जटा बिसाला। सो तापस प्रसिद्ध कलिकाला॥

दो. असुभ बेष भूषन धरें भच्छाभच्छ जे खाहिं।
ते जोगी ते सिद्ध नर पूज्य ते कलिजुग माहिं॥ ९८क॥

सो. जे अपकारी चार तिन्ह कर गौरव मान्य ते।
मन क्रम बचन लबार ते बकता कलिकाल महुँ॥ ९८ख॥

नारि बिबस नर सकल गोसा। नाचहिं नट मर्कट की ना॥
सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ग्याना। मेलि जने लेहिं कुदाना॥
सब नर काम लोभ रत क्रोधी। देव बिप्र श्रुति संत बिरोधी॥

गुन मंदिर सुंदर पति त्यागी। भजहिं नारि पर पुरुष अभागी॥
सौभागिनीं बिभूषन हीना। बिधवन्ह के सिंगार नबीना॥
गुर सिष बधिर अंध का लेखा। एक न सुनइ एक नहिं देखा॥
हरइ सिष्य धन सोक न हर। सो गुर घोर नरक महुँ पर॥
मातु पिता बालकन्हि बोलाबहिं। उदर भरै सो धर्म सिखावहिं॥

दो. ब्रह्म ग्यान बिनु नारि नर कहहिं न दूसरि बात।
कौड़ी लागि लोभ बस करहिं बिप्र गुर घात॥ ९९क॥

बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन हम तुम्ह ते कछु घाटि।
जानइ ब्रह्म सो बिप्रबर आँखि देखावहिं डाटि॥ ९९ख॥

पर त्रिय लंपट कपट सयाने। मोह द्रोह ममता लपटाने॥
ते अभेदबादी ग्यानी नर। देखा मैं चरित्र कलिजुग कर॥
आपु ग अरु तिन्हहू घालहिं। जे कहुँ सत मारग प्रतिपालहिं॥
कल्प कल्प भरि एक एक नरका। परहिं जे दूषहिं श्रुति करि तरका॥
जे बरनाधम तेलि कुम्हारा। स्वपच किरात कोल कलवारा॥
नारि मु गृह संपति नासी। मूड़ मुड़ा होहिं सन्यासी॥
ते बिप्रन्ह सन आपु पुजावहिं। उभय लोक निज हाथ नसावहिं॥

बिप्र निरच्छर लोलुप कामी। निराचार सठ बृषली स्वामी॥
सूद्र करहिं जप तप ब्रत नाना। बैठि बरासन कहहिं पुराना॥
सब नर कल्पित करहिं अचारा। जा न बरनि अनीति अपारा॥

दो. भ बरन संकर कलि भिन्नसेतु सब लोग।
करहिं पाप पावहिं दुख भय रुज सोक बियोग॥ १००क॥

श्रुति संमत हरि भक्ति पथ संजुत बिरति बिबेक।
तेहि न चलहिं नर मोह बस कल्पहिं पंथ अनेक॥ १००ख॥

छं. बहु दाम सँवारहिं धाम जती। बिषया हरि लीन्हि न रहि बिरती॥
तपसी धनवंत दरिद्र गृही। कलि कौतुक तात न जात कही॥
कुलवंति निकारहिं नारि सती। गृह आनिहिं चेरी निबेरि गती॥
सुत मानहिं मातु पिता तब लौं। अबलानन दीख नहीं जब लौं॥
ससुरारि पिआरि लगी जब तें। रिपरूप कुटुंब भ तब तें॥
नृप पाप परायन धर्म नहीं। करि दंड बिडंब प्रजा नितहीं॥
धनवंत कुलीन मलीन अपी। द्विज चिन्ह जने उघार तपी॥
नहिं मान पुरान न बेदहि जो। हरि सेवक संत सही कलि सो।
कबि बृंद उदार दुनी न सुनी। गुन दूषक ब्रात न कोपि गुनी॥

कलि बारहिं बार दुकाल परै। बिनु अन्न दुखी सब लोग मरै॥

दो. सुनु खगेस कलि कपट हठ दंभ द्वेष पाषंड।
मान मोह मारादि मद ब्यापि रहे ब्रह्मंड॥ १०१क॥

तामस धर्म करहिं नर जप तप ब्रत मख दान।
देव न बरषहिं धरनीं ब न जामहिं धान॥ १०१ख॥

छं. अबला कच भूषन भूरि छुधा। धनहीन दुखी ममता बहुधा॥
सुख चाहहिं मूढ़ न धर्म रता। मति थोरि कठोरि न कोमलता॥ १॥

नर पीड़ित रोग न भोग कहीं। अभिमान बिरोध अकारनहीं॥
लघु जीवन संबतु पंच दसा। कलपांत न नास गुमानु असा॥ २॥

कलिकाल बिहाल कि मनुजा। नहिं मानत क्वौ अनुजा तनुजा।
नहिं तोष बिचार न सीतलता। सब जाति कुजाति भ मगता॥ ३॥

इरिषा परुषाच्छर लोलुपता। भरि पूरि रही समता बिगता॥
सब लोग बियोग बिसोक हु। बरनाश्रम धर्म अचार ग॥ ४॥

दम दान दया नहिं जानपनी। जड़ता परबंचनताति घनी॥
तनु पोषक नारि नरा सगरे। परनिंदक जे जग मो बगरे॥ ५॥

दो. सुनु ब्यालारि काल कलि मल अवगुन आगार।
गुनउँ बहुत कलिजुग कर बिनु प्रयास निस्तार॥ १०२क॥

कृतजुग त्रेता द्वापर पूजा मख अरु जोग।
जो गति हो सो कलि हरि नाम ते पावहिं लोग॥ १०२ख॥

कृतजुग सब जोगी बिग्यानी। करि हरि ध्यान तरहिं भव प्रानी॥
त्रेताँ बिबिध जग्य नर करहीं। प्रभुहि समर्पि कर्म भव तरहीं॥
द्वापर करि रघुपति पद पूजा। नर भव तरहिं उपाय न दूजा॥
कलिजुग केवल हरि गुन गाहा। गावत नर पावहिं भव थाहा॥
कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना। एक अधार राम गुन गाना॥
सब भरोस तजि जो भज रामहि। प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहि॥
सो भव तर कछु संसय नाहीं। नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं॥
कलि कर एक पुनीत प्रतापा। मानस पुन्य होहिं नहिं पापा॥

दो. कलिजुग सम जुग आन नहिं जौं नर कर बिस्वास।
गा राम गुन गन बिमलँ भव तर बिनहिं प्रयास॥ १०३क॥

प्रगट चारि पद धर्म के कलिल महुँ एक प्रधान।
जेन केन बिधि दीन्हें दान करइ कल्यान॥ १०३ख॥

नित जुग धर्म होहिं सब केरे। हृदयँ राम माया के प्रेरे॥
सुद्ध सत्व समता बिग्याना। कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना॥
सत्व बहुत रज कछु रति कर्मा। सब बिधि सुख त्रेता कर धर्मा॥
बहु रज स्वल्प सत्व कछु तामस। द्वापर धर्म हरष भय मानस॥
तामस बहुत रजोगुन थोरा। कलि प्रभाव बिरोध चहुँ ओरा॥
बुध जुग धर्म जानि मन माहीं। तजि अधर्म रति धर्म कराहीं॥
काल धर्म नहिं ब्यापहिं ताही। रघुपति चरन प्रीति अति जाही॥
नट कृत बिकट कपट खगराया। नट सेवकहि न ब्यापइ माया॥

दो. हरि माया कृत दोष गुन बिनु हरि भजन न जाहिं।
भजि राम तजि काम सब अस बिचारि मन माहिं॥ १०४क॥

तेहि कलिकाल बरष बहु बसेँ अवध बिहगेस।

परे दुकाल बिपति बस तब मैं गयउँ बिदेस ॥ १०४ख ॥

गयउँ उजेनी सुनु उरगारी । दीन मलीन दरिद्र दुखारी ॥
गँ काल कछु संपति पा । तहँ पुनि करउँ संभु सेवका ॥
बिप्र एक बैदिक सिव पूजा । करइ सदा तेहि काजु न दूजा ॥
परम साधु परमारथ बिंदक । संभु उपासक नहिं हरि निंदक ॥
तेहि सेवउँ मैं कपट समेता । द्विज दयाल अति नीति निकेता ॥
बाहिज नम्र देखि मोहि सां । बिप्र पढ़ाव पुत्र की नां ॥
संभु मंत्र मोहि द्विजबर दीन्हा । सुभ उपदेस बिबिध बिधि कीन्हा ॥
जपउँ मंत्र सिव मंदिर जा । हृदयँ दंभ अहमिति अधिका ॥

दो. मैं खल मल संकुल मति नीच जाति बस मोह ।
हरि जन द्विज देखें जरउँ करउँ बिष्नु कर द्रोह ॥ १०५क ॥

सो. गुर नित मोहि प्रबोध दुखित देखि आचरन मम ।
मोहि उपजइ अति क्रोध दंभिहि नीति कि भाव ॥ १०५ख ॥

एक बार गुर लीन्ह बोला । मोहि नीति बहु भाँति सिखा ॥
सिव सेवा कर फल सुत सो । अबिरल भगति राम पद हो ॥

रामहि भजहिं तात सिव धाता। नर पावँर कै केतिक बाता॥
जासु चरन अज सिव अनुरागी। तातु द्रोहँ सुख चहसि अभागी॥
हर कहुँ हरि सेवक गुर कहे। सुनि खगनाथ हृदय मम दहे॥
अधम जाति मैं बिद्या पाँ। भयउँ जथा अहि दूध पिआँ॥
मानी कुटिल कुभाग्य कुजाती। गुर कर द्रोह करउँ दिनु राती॥
अति दयाल गुर स्वल्प न क्रोधा। पुनि पुनि मोहि सिखाव सुबोधा॥
जेहि ते नीच बड़ा पावा। सो प्रथमहिं हति ताहि नसावा॥
धूम अनल संभव सुनु भा। तेहि बुझाव घन पदवी पा॥
रज मग परी निरादर रह। सब कर पद प्रहार नित सह॥
मरुत उड़ाव प्रथम तेहि भर। पुनि नृप नयन किरीटन्हि पर॥
सुनु खगपति अस समुझि प्रसंगा। बुध नहिं करहिं अधम कर संगा॥
कबि कोबिद गावहिं असि नीती। खल सन कलह न भल नहिं प्रीती॥
उदासीन नित रहि गोसां। खल परिहरि स्वान की नां॥
मैं खल हृदयँ कपट कुटिला। गुर हित कहइ न मोहि सोहा॥

दो. एक बार हर मंदिर जपत रहेँ सिव नाम।
गुर आयउ अभिमान तें उठि नहिं कीन्ह प्रनाम॥ १०६क॥

सो दयाल नहिं कहे कछु उर न रोष लवलेस।

अति अघ गुर अपमानता सहि नहिं सके महेस ॥ १०६ख ॥

मंदिर माझ भ नभ बानी । रे हतभाग्य अग्य अभिमानी ॥
जद्यपि तव गुर कें नहिं क्रोधा । अति कृपाल चित सम्यक बोधा ॥
तदपि साप सठ दैहउँ तोही । नीति बिरोध सोहा न मोही ॥
जौं नहिं दंड करौं खल तोरा । भ्रष्ट हो श्रुतिमारग मोरा ॥
जे सठ गुर सन इरिषा करहीं । रौरव नरक कोटि जुग परहीं ॥
त्रिजग जोनि पुनि धरहिं सरीरा । अयुत जन्म भरि पावहिं पीरा ॥
बैठ रहेसि अजगर इव पापी । सर्प होहि खल मल मति ब्यापी ॥
महा बिटप कोटर महुँ जा ॥ रहु अधमाधम अधगति पा ॥

दो. हाहाकार कीन्ह गुर दारुन सुनि सिव साप ॥
कंपित मोहि बिलोकि अति उर उपजा परिताप ॥ १०७क ॥

करि दंडवत सप्रेम द्विज सिव सन्मुख कर जोरि ।
बिनय करत गदगद स्वर समुझि घोर गति मोरि ॥ १०७ख ॥

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं । विंभुं ब्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं ।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीह । चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं ॥

निराकारमोंकारमूलं तुरीयं। गिरा ग्यान गोतीतमीशं गिरीशं॥
करालं महाकाल कालं कृपालं। गुणागार संसारपारं नतोऽहं॥
तुषाराद्रि संकाश गौरं गभीरं। मनोभूत कोटि प्रभा श्री शरीरं॥
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गंगा। लसद्भालबालेन्दु कंठे भुजंगा॥
चलत्कुंडलं भ्रू सुनेत्रं विशालं। प्रसन्नाननं नीलकंठं दयालं॥
मृगाधीशचर्माम्बरं मुण्डमालं। प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि॥
प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं। अखंडं अजं भानुकोटिप्रकाशं॥
त्रयःशूल निर्मूलनं शूलपाणिं। भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यं॥
कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी। सदा सज्जनान्ददाता पुरारी॥
चिदानंदसंदोह मोहापहारी। प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी॥
न यावद् उमानाथ पादारविन्दं। भजंतीह लोके परे वा नराणां॥
न तावत्सुखं शान्ति सन्तापनाशं। प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं॥
न जानामि योगं जपं नैव पूजां। नतोऽहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यं॥
जरा जन्म दुःखौघ तातप्यमानं। प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो॥
श्लोक-रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति॥ ९॥

दो. -सुनि बिनती सर्बग्य सिव देखि ब्रिप्र अनुरागु।
पुनि मंदिर नभबानी भइ द्विजबर बर मागु॥ १०८क॥

जौं प्रसन्न प्रभु मो पर नाथ दीन पर नेहु।
निज पद भगति दे प्रभु पुनि दूसर बर देहु॥ १०८ख॥

तव माया बस जीव जड़ संतत फिरइ भुलान।
तेहि पर क्रोध न करि प्रभु कृपा सिंधु भगवान॥ १०८ग॥

संकर दीनदयाल अब एहि पर होहु कृपाल।
साप अनुग्रह हो जेहिं नाथ थोरेहीं काल॥ १०८घ॥

एहि कर हो परम कल्याना। सो करहु अब कृपानिधाना॥
बिप्रगिरा सुनि परहित सानी। एवमस्तु इति भइ नभबानी॥
जदपि कीन्ह एहिं दारुन पापा। मैं पुनि दीन्ह कोप करि सापा॥
तदपि तुम्हार साधुता देखी। करिहउँ एहि पर कृपा बिसेषी॥
छमासील जे पर उपकारी। ते द्विज मोहि प्रिय जथा खरारी॥
मोर श्राप द्विज ब्यर्थ न जाहि। जन्म सहस अवस्य यह पाहि॥
जनमत मरत दुसह दुख हो। अहि स्वल्पउ नहिं ब्यापिहि सो॥
कवनेँ जन्म मिटिहि नहिं ग्याना। सुनहि सूद्र मम बचन प्रवाना॥
रघुपति पुरीं जन्म तब भय। पुनि तैं मम सेवाँ मन दय॥

पुरी प्रभाव अनुग्रह मोरें। राम भगति उपजिहि उर तोरें॥
सुनु मम बचन सत्य अब भा। हरितोषन ब्रत द्विज सेवका॥
अब जनि करहि बिप्र अपमाना। जानेहु संत अनंत समाना॥
इंद्र कुलिस मम सूल बिसाला। कालदंड हरि चक्र कराला॥
जो इन्ह कर मारा नहिं मर। बिप्रद्रोह पावक सो जर॥
अस बिबेक राखेहु मन माहीं। तुम्ह कहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं॥
औरउ एक आसिषा मोरी। अप्रतिहत गति होहि तोरी॥

दो. सुनि सिव बचन हरषि गुर एवमस्तु इति भाषि।
मोहि प्रबोधि गयउ गृह संभु चरन उर राखि॥ १०९क॥

प्रेरित काल बिधि गिरि जा भयउँ मैं ब्याल।
पुनि प्रयास बिनु सो तनु जजेँ गँ कछु काल॥ १०९ख॥

जो तनु धरउँ तजउँ पुनि अनायास हरिजान।
जिमि नूतन पट पहिरइ नर परिहरइ पुरान॥ १०९ग॥

सिवँ राखी श्रुति नीति अरु मैं नहिं पावा क्लेस।
एहि बिधि धरेँ बिबिध तनु ग्यान न गयउ खगेस॥ १०९घ॥

त्रिजग देव नर जो तनु धरउँ। तहँ तहँ राम भजन अनुसरँ॥
एक सूल मोहि बिसर न का। गुर कर कोमल सील सुभा॥
चरम देह द्विज कै मैं पा। सुर दुर्लभ पुरान श्रुति गा॥
खेलउँ तहूँ बालकन्ह मीला। करउँ सकल रघुनायक लीला॥
प्रौढ़ भँ मोहि पिता पढ़ावा। समझउँ सुनउँ गुनउँ नहिं भावा॥
मन ते सकल बासना भागी। केवल राम चरन लय लागी॥
कहु खगेस अस कवन अभागी। खरी सेव सुरधेनुहि त्यागी॥
प्रेम मगन मोहि कछु न सोहा। हारे पिता पढ़ा पढ़ा॥
भ कालबस जब पितु माता। मैं बन गयउँ भजन जनत्राता॥
जहँ जहँ बिपिन मुनीस्वर पावउँ। आश्रम जा जा सिरु नावउँ॥
बूझत तिन्हहि राम गुन गाहा। कहहिं सुनउँ हरषित खगनाहा॥
सुनत फिरउँ हरि गुन अनुबादा। अब्याहत गति संभु प्रसादा॥
छूटी त्रिबिध ईषना गाढ़ी। एक लालसा उर अति बाढ़ी॥
राम चरन बारिज जब देखौं। तब निज जन्म सफल करि लेखौं॥
जेहि पूँछउँ सो मुनि अस कह। ईस्वर सर्ब भूतमय अह॥
निर्गुन मत नहिं मोहि सोहा। सगुन ब्रह्म रति उर अधिका॥

दो. गुर के बचन सुरति करि राम चरन मनु लाग।

रघुपति जस गावत फिरउँ छन छन नव अनुराग ॥ ११०क ॥

मेरु सिखर बट छायाँ मुनि लोमस आसीन ।
देखि चरन सिरु नायउँ बचन कहैं अति दीन ॥ ११०ख ॥

सुनि मम बचन बिनीत मृदु मुनि कृपाल खगराज ।
मोहि सादर पूँछत भ द्विज आयहु केहि काज ॥ ११०ग ॥

तब मैं कहा कृपानिधि तुम्ह सर्बग्य सुजान ।
सगुन ब्रह्म अवराधन मोहि कहहु भगवान ॥ ११०घ ॥

तब मुनिष रघुपति गुन गाथा । कहे कछुक सादर खगनाथा ॥
ब्रह्मग्यान रत मुनि बिग्यानि । मोहि परम अधिकारी जानी ॥
लागे करन ब्रह्म उपदेसा । अज अद्वेत अगुन हृदयेसा ॥
अकल अनीह अनाम अरुपा । अनुभव गम्य अखंड अनूपा ॥
मन गोतीत अमल अबिनासी । निर्बिकार निरवधि सुख रासी ॥
सो तैं ताहि तोहि नहिं भेदा । बारि बीचि इव गावहि बेदा ॥
बिबिध भाँति मोहि मुनि समुझावा । निर्गुन मत मम हृदयँ न आवा ॥
पुनि मैं कहैं ना पद सीसा । सगुन उपासन कहहु मुनीसा ॥

राम भगति जल मम मन मीना। किमि बिलगा मुनीस प्रबीना॥
सो उपदेस कहहु करि दाया। निज नयनन्हि देखौं रघुराया॥
भरि लोचन बिलोकि अवधेसा। तब सुनिहउँ निर्गुन उपदेसा॥
मुनि पुनि कहि हरिकथा अनूपा। खंडि सगुन मत अगुन निरूपा॥
तब मैं निर्गुन मत कर दूरी। सगुन निरूपउँ करि हठ भूरी॥
उत्तर प्रतित्तर मैं कीन्हा। मुनि तन भ क्रोध के चीन्हा॥
सुनु प्रभु बहुत अवग्या किँ। उपज क्रोध ग्यानिन्ह के हिँ॥
अति संघरषन जौं कर को। अनल प्रगट चंदन ते हो॥

दो. -बारंबार सकोप मुनि करइ निरुपन ग्यान।
मैं अपनें मन बैठ तब करउँ बिबिध अनुमान॥ १११क॥

क्रोध कि द्वेतबुद्धि बिनु द्वैत कि बिनु अग्यान।
मायाबस परिछिन्न जड़ जीव कि ईस समान॥ १११ख॥

कबहुँ कि दुख सब कर हित ताकें। तेहि कि दरिद्र परस मनि जाकें॥
परद्रोही की होहिं निसंका। कामी पुनि कि रहहिं अकलंका॥
बंस कि रह द्विज अनहित कीन्हें। कर्म कि होहिं स्वरूपहि चीन्हें॥
काहू सुमति कि खल सँग जामी। सुभ गति पाव कि परत्रिय गामी॥

भव कि परहिं परमात्मा बिंदक। सुखी कि होहिं कबहुँ हरिनिंदक॥
राजु कि रहइ नीति बिनु जानें। अघ कि रहहिं हरिचरित बखानें॥
पावन जस कि पुन्य बिनु हो। बिनु अघ अजस कि पावइ को॥
लाभु कि किछु हरि भगति समाना। जेहि गावहिं श्रुति संत पुराना॥
हानि कि जग एहि सम किछु भा। भजि न रामहि नर तनु पा॥
अघ कि पिसुनता सम कछु आना। धर्म कि दया सरिस हरिजाना॥
एहि बिधि अमिति जुगुति मन गुनँ। मुनि उपदेस न सादर सुनँ॥
पुनि पुनि सगुन पच्छ मैं रोपा। तब मुनि बोले बचन सकोपा॥
मूढ़ परम सिख दैं न मानसि। उत्तर प्रतित्तर बहु आनसि॥
सत्य बचन बिस्वास न करही। बायस इव सबही ते डरही॥
सठ स्वपच्छ तब हृदयँ बिसाला। सपदि होहि पच्छी चंडाला॥
लीन्ह श्राप मैं सीस चढ़ा। नहिं कछु भय न दीनता आ॥

दो. तुरत भयउँ मैं काग तब पुनि मुनि पद सिरु ना।
सुमिरि राम रघुबंस मनि हरषित चलेँ उड़ा॥ ११२क॥

उमा जे राम चरन रत बिगत काम मद क्रोध॥
निज प्रभुमय देखहिं जगत केहि सन करहिं बिरोध॥ ११२ख॥

सुनु खगेस नहिं कछु रिषि दूषन। उर प्रेरक रघुबंस बिभूषन॥
कृपासिंधु मुनि मति करि भोरी। लीन्हि प्रेम परिच्छा मोरी॥
मन बच क्रम मोहि निज जन जाना। मुनि मति पुनि फेरी भगवाना॥
रिषि मम महत सीलता देखी। राम चरन बिस्वास बिसेषी॥
अति बिसमय पुनि पुनि पछिता। सादर मुनि मोहि लीन्ह बोला॥
मम परितोष बिबिध बिधि कीन्हा। हरषित राममंत्र तब दीन्हा॥
बालकरूप राम कर ध्याना। कहे मोहि मुनि कृपानिधाना॥
सुंदर सुखद मिहि अति भावा। सो प्रथमहिं मैं तुम्हहि सुनावा॥
मुनि मोहि कछुक काल तहँ राखा। रामचरितमानस तब भाषा॥
सादर मोहि यह कथा सुना। पुनि बोले मुनि गिरा सुहा॥
रामचरित सर गुप्त सुहावा। संभु प्रसाद तात मैं पावा॥
तोहि निज भगत राम कर जानी। ताते मैं सब कहँ बखानी॥
राम भगति जिन्ह कें उर नाहीं। कबहुँ न तात कहि तिन्ह पाहीं॥
मुनि मोहि बिबिध भाँति समुझावा। मैं सप्रेम मुनि पद सिरु नावा॥
निज कर कमल परसि मम सीसा। हरषित आसिष दीन्ह मुनीसा॥
राम भगति अबिरल उर तोरें। बसिहि सदा प्रसाद अब मोरें॥

दो. -सदा राम प्रिय होहु तुम्ह सुभ गुन भवन अमान।
कामरूप इच्धामरन ग्यान बिराग निधान॥ ११३क॥

जेंहिं आश्रम तुम्ह बसब पुनि सुमिरत श्रीभगवंत।
ब्यापिहि तहँ न अबिद्या जोजन एक प्रजंत॥ ११३ख॥

काल कर्म गुन दोष सुभा। कछु दुख तुम्हहि न ब्यापिहि का॥
राम रहस्य ललित बिधि नाना। गुप्त प्रगट इतिहास पुराना॥
बिनु श्रम तुम्ह जानब सब सो। नित नव नेह राम पद हो॥
जो इच्छा करिहहु मन माहीं। हरि प्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं॥
सुनि मुनि आसिष सुनु मतिधीरा। ब्रह्मगिरा भइ गगन गँभीरा॥
एवमस्तु तव बच मुनि ग्यानी। यह मम भगत कर्म मन बानी॥
सुनि नभगिरा हरष मोहि भय। प्रेम मगन सब संसय गय॥
करि बिनती मुनि आयसु पा। पद सरोज पुनि पुनि सिरु ना॥
हरष सहित एहिं आश्रम आयउँ। प्रभु प्रसाद दुर्लभ बर पायउँ॥
इहाँ बसत मोहि सुनु खग ईसा। बीते कलप सात अरु बीसा॥
करउँ सदा रघुपति गुन गाना। सादर सुनहिं बिहंग सुजाना॥
जब जब अवधपुरीं रघुबीरा। धरहिं भगत हित मनुज सरीरा॥
तब तब जा राम पुर रहँ। सिसुलीला बिलोकि सुख लहँ॥
पुनि उर राखि राम सिसुरूपा। निज आश्रम आवउँ खगभूपा॥
कथा सकल मैं तुम्हहि सुना। काग देह जेहिं कारन पा॥

कहिँ तात सब प्रस्न तुम्हारी। राम भगति महिमा अति भारी॥

दो. ताते यह तन मोहि प्रिय भयउ राम पद नेह।
निज प्रभु दरसन पायउँ ग सकल संदेह॥ ११४क॥

मासपारायण उन्तीसवाँ विश्राम

भगति पच्छ हठ करि रहैं दीन्हि महारिषि साप।
मुनि दुर्लभ बर पायउँ देखहु भजन प्रताप॥ ११४ख॥

जे असि भगति जानि परिहरहीं। केवल ग्यान हेतु श्रम करहीं॥
ते जड़ कामधेनु गृहँ त्यागी। खोजत आकु फिरहिं पय लागी॥
सुनु खगेस हरि भगति बिहा। जे सुख चाहहिं आन उपा॥
ते सठ महासिंधु बिनु तरनी। पैरि पार चाहहिं जड़ करनी॥
सुनि भसुंडि के बचन भवानी। बोले गरुड़ हरषि मृदु बानी॥
तव प्रसाद प्रभु मम उर माहीं। संसय सोक मोह भ्रम नाहीं॥
सुनैं पुनीत राम गुन ग्रामा। तुम्हरी कृपाँ लहैं बिश्रामा॥
एक बात प्रभु पूँछउँ तोही। कहहु बुझा कृपानिधि मोही॥
कहहिं संत मुनि बेद पुराना। नहिं कछु दुर्लभ ग्यान समाना॥
सो मुनि तुम्ह सन कहे गोसां। नहिं आदरेहु भगति की नां॥

ग्यानहि भगतिहि अंतर केता। सकल कहहु प्रभु कृपा निकेता॥
सुनि उरगारि बचन सुख माना। सादर बोले काग सुजाना॥
भगतिहि ग्यानहि नहिं कछु भेदा। उभय हरहिं भव संभव खेदा॥
नाथ मुनीस कहहिं कछु अंतर। सावधान सो सुनु बिहंगबर॥
ग्यान बिराग जोग बिग्याना। ए सब पुरुष सुनहु हरिजाना॥
पुरुष प्रताप प्रबल सब भाँती। अबला अबल सहज जड़ जाती॥

दो. -पुरुष त्यागि सक नारिहि जो बिरक्त मति धीर॥
न तु कामी बिषयाबस बिमुख जो पद रघुबीर॥ ११५क॥

सो. सो मुनि ग्याननिधान मृगनयनी बिधु मुख निरखि।
बिबस हो हरिजान नारि बिष्नु माया प्रगट॥ ११५ख॥

इहाँ न पच्छपात कछु राखउँ। बेद पुरान संत मत भाषउँ॥
मोह न नारि नारि कें रूपा। पन्नगारि यह रीति अनूपा॥
माया भगति सुनहु तुम्ह दो। नारि बर्ग जानइ सब को॥
पुनि रघुबीरहि भगति पिआरी। माया खलु नर्तकी बिचारी॥
भगतिहि सानुकूल रघुराया। ताते तेहि डरपति अति माया॥
राम भगति निरुपम निरुपाधी। बसइ जासु उर सदा अबाधी॥

तेहि बिलोकि माया सकुचा। करि न सकइ कछु निज प्रभुता॥
अस बिचारि जे मुनि बिग्यानी। जाचहीं भगति सकल सुख खानी॥

दो. यह रहस्य रघुनाथ कर बेगि न जानइ को।
जो जानइ रघुपति कृपाँ सपनेहुँ मोह न हो॥ ११६क॥

औरउ ग्यान भगति कर भेद सुनहु सुप्रबीन।
जो सुनि हो राम पद प्रीति सदा अबिछीन॥ ११६ख॥

सुनहु तात यह अकथ कहानी। समुझत बनइ न जा बखानी॥
ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुख रासी॥
सो मायाबस भयउ गोसां। बँध्यो कीर मरकट की ना॥
जड़ चेतनहि ग्रंथि परि ग। जदपि मृषा छूटत कठिन॥
तब ते जीव भयउ संसारी। छूट न ग्रंथि न हो सुखारी॥
श्रुति पुरान बहु कहे उपा। छूट न अधिक अधिक अरुझा॥
जीव हृदयँ तम मोह बिसेषी। ग्रंथि छूट किमि परइ न देखी॥
अस संजोग ईस जब कर। तबहुँ कदाचित सो निरुर॥
सात्त्विक श्रद्धा धेनु सुहा। जौं हरि कृपाँ हृदयँ बस आ॥
जप तप ब्रत जम नियम अपारा। जे श्रुति कह सुभ धर्म अचारा॥

ते तृन हरित चरै जब गा। भाव बच्छ सिसु पा पेन्हा॥
नो निबृत्ति पात्र बिस्वासा। निर्मल मन अहीर निज दासा॥
परम धर्ममय पय दुहि भा। अवटै अनल अकाम बिहा॥
तोष मरुत तब छमाँ जुड़ावै। धृति सम जावनु दे जमावै॥
मुदिताँ मथैं बिचार मथानी। दम अधार रजु सत्य सुबानी॥
तब मथि काढ़ि ले नवनीता। बिमल बिराग सुभग सुपुनीता॥

दो. जोग अगिनि करि प्रगट तब कर्म सुभासुभ ला।
बुद्धि सिरावैं ग्यान घृत ममता मल जरि जा॥ ११७क॥

तब बिग्यानरूपिनि बुद्धि बिसद घृत पा।
चित्त दिआ भरि धरै दृढ़ समता दिटि बना॥ ११७ख॥

तीनि अवस्था तीनि गुन तेहि कपास तें काढ़ि।
तूल तुरीय सँवारि पुनि बाती करै सुगाढ़ि॥ ११७ग॥

सो. एहि बिधि लेसै दीप तेज रासि बिग्यानमय॥
जातहिं जासु समीप जरहिं मदादिक सलभ सब॥ ११७घ॥

सोहमस्मि इति बृत्ति अखंडा। दीप सिखा सो परम प्रचंडा॥
आतम अनुभव सुख सुप्रकासा। तब भव मूल भेद भ्रम नासा॥
प्रबल अबिद्या कर परिवारा। मोह आदि तम मिटइ अपारा॥
तब सो बुद्धि पा उँजिआरा। उर गृहँ बैठि ग्रंथि निरुआरा॥
छोरन ग्रंथि पाव जौं सो। तब यह जीव कृतारथ हो॥
छोरत ग्रंथि जानि खगराया। बिघ्न अनेक करइ तब माया॥
रिद्धि सिद्धि प्रेरइ बहु भा। बुद्धहि लोभ दिखावहिं आ॥
कल बल छल करि जाहिं समीपा। अंचल बात बुझावहिं दीपा॥
हो बुद्धि जौं परम सयानी। तिन्ह तन चितव न अनहित जानी॥
जौं तेहि बिघ्न बुद्धि नहिं बाधी। तौ बहोरि सुर करहिं उपाधी॥
इंद्रीं द्वार झरोखा नाना। तहँ तहँ सुर बैठे करि थाना॥
आवत देखहिं बिषय बयारी। ते हठि देही कपाट उघारी॥
जब सो प्रभंजन उर गृहँ जा। तबहिं दीप बिग्यान बुझा॥
ग्रंथि न छूटि मिटा सो प्रकासा। बुद्धि बिकल भइ बिषय बतासा॥
इंद्रिन्ह सुरन्ह न ग्यान सोहा। बिषय भोग पर प्रीति सदा॥
बिषय समीर बुद्धि कृत भोरी। तेहि बिधि दीप को बार बहोरी॥

दो. तब फिरि जीव बिबिध बिधि पावइ संसृति क्लेस।
हरि माया अति दुस्तर तरि न जा बिहगेस॥ ११८क॥

कहत कठिन समुझत कठिन साधन कठिन बिबेक।
हो घुनाच्छर न्याय जौं पुनि प्रत्यूह अनेक॥ ११८ख॥

ग्यान पंथ कृपान कै धारा। परत खगेस हो नहिं बारा॥
जो निर्बिघ्न पंथ निर्बहइ। सो कैवल्य परम पद लहइ॥
अति दुर्लभ कैवल्य परम पद। संत पुरान निगम आगम बद॥
राम भजत सो मुकुति गोसा। अनइच्छित आवइ बरिआ॥
जिमि थल बिनु जल रहि न सका। कोटि भाँति को करै उपा॥
तथा मोच्छ सुख सुनु खगरा। रहि न सकइ हरि भगति बिहा॥
अस बिचारि हरि भगत सयाने। मुक्ति निरादर भगति लुभाने॥
भगति करत बिनु जतन प्रयासा। संसृति मूल अबिद्या नासा॥
भोजन करि तृपिति हित लागी। जिमि सो असन पचवै जठरागी॥
असि हरिभगति सुगम सुखदा। को अस मूढ़ न जाहि सोहा॥

दो. सेवक सेब्य भाव बिनु भव न तरि उरगारि॥
भजहु राम पद पंकज अस सिद्धांत बिचारि॥ ११९क॥

जो चेतन कहँ ज़ड़ करइ ज़ड़हि करइ चैतन्य।

अस समर्थ रघुनायकहिं भजहिं जीव ते धन्य ॥ ११९ख ॥

कहैं ग्यान सिद्धांत बुझा । सुनहु भगति मनि कै प्रभुता ॥
राम भगति चिंतामनि सुंदर । बसइ गरुड़ जाके उर अंतर ॥
परम प्रकास रूप दिन राती । नहिं कछु चहि दिआ घृत बाती ॥
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा । लोभ बात नहिं ताहि बुझावा ॥
प्रबल अबिद्या तम मिटि जा । हारहिं सकल सलभ समुदा ॥
खल कामादि निकट नहिं जाहीं । बसइ भगति जाके उर माहीं ॥
गरल सुधासम अरि हित हो । तेहि मनि बिनु सुख पाव न को ॥
ब्यापहिं मानस रोग न भारी । जिन्ह के बस सब जीव दुखारी ॥
राम भगति मनि उर बस जाकें । दुख लवलेस न सपनेहुँ ताकें ॥
चतुर सिरोमनि ते जग माहीं । जे मनि लागि सुजतन कराहीं ॥
सो मनि जदपि प्रगट जग अह । राम कृपा बिनु नहिं को लह ॥
सुगम उपाय पाबे केरे । नर हतभाग्य देहिं भटमेरे ॥
पावन पर्बत बेद पुराना । राम कथा रुचिराकर नाना ॥
मर्मी सज्जन सुमति कुदारी । ग्यान बिराग नयन उरगारी ॥
भाव सहित खोजइ जो प्रानी । पाव भगति मनि सब सुख खानी ॥
मोरें मन प्रभु अस बिस्वासा । राम ते अधिक राम कर दासा ॥
राम सिंधु घन सज्जन धीरा । चंदन तरु हरि संत समीरा ॥

सब कर फल हरि भगति सुहा। सो बिनु संत न काहूँ पा॥
अस बिचारि जो कर सतसंगा। राम भगति तेहि सुलभ बिहंगा॥

दो. ब्रह्म पयोनिधि मंदर ग्यान संत सुर आहिं।
कथा सुधा मथि काढ़हिं भगति मधुरता जाहिं॥ १२०क॥

बिरति चर्म असि ग्यान मद लोभ मोह रिपु मारि।
जय पा सो हरि भगति देखु खगेस बिचारि॥ १२०ख॥

पुनि सप्रेम बोले खगरा। जौं कृपाल मोहि ऊपर भा॥
नाथ मोहि निज सेवक जानी। सप्त प्रस्न कहहु बखानी॥
प्रथमहिं कहहु नाथ मतिधीरा। सब ते दुर्लभ कवन सरीरा॥
बड़ दुख कवन कवन सुख भारी। सो संछेपहिं कहहु बिचारी॥
संत असंत मरम तुम्ह जानहु। तिन्ह कर सहज सुभाव बखानहु॥
कवन पुन्य श्रुति बिदित बिसाला। कहहु कवन अघ परम कराला॥
मानस रोग कहहु समुझा। तुम्ह सर्बग्य कृपा अधिका॥
तात सुनहु सादर अति प्रीती। मैं संछेप कहउँ यह नीती॥
नर तन सम नहिं कवनि देही। जीव चराचर जाचत तेही॥
नरग स्वर्ग अपबर्ग निसेनी। ग्यान बिराग भगति सुभ देनी॥

सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर। होहिं बिषय रत मंद मंद तर॥

काँच किरिच बदलें ते लेही। कर ते डारि परस मनि देहीं॥

नहिं दरिद्र सम दुख जग माहीं। संत मिलन सम सुख जग नाहीं॥

पर उपकार बचन मन काया। संत सहज सुभा खगराया॥

संत सहहिं दुख परहित लागी। परदुख हेतु असंत अभागी॥

भूर्ज तरू सम संत कृपाला। परहित निति सह बिपति बिसाला॥

सन इव खल पर बंधन कर। खाल कढ़ा बिपति सहि मर॥

खल बिनु स्वारथ पर अपकारी। अहि मूषक इव सुनु उरगारी॥

पर संपदा बिनासि नसाहीं। जिमि ससि हति हिम उपल बिलाहीं॥

दुष्ट उदय जग आरति हेतू। जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू॥

संत उदय संतत सुखकारी। बिस्व सुखद जिमि इंदु तमारी॥

परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा। पर निंदा सम अघ न गरीसा॥

हर गुर निंदक दादुर हो। जन्म सहस्र पाव तन सो॥

द्विज निंदक बहु नरक भोग करि। जग जनमइ बायस सरीर धरि॥

सुर श्रुति निंदक जे अभिमानी। रौरव नरक परहिं ते प्रानी॥

होहिं उलूक संत निंदा रत। मोह निसा प्रिय ग्यान भानु गत॥

सब के निंदा जे जड़ करहीं। ते चमगादुर हो अवतरहीं॥

सुनहु तात अब मानस रोगा। जिन्ह ते दुख पावहिं सब लोगा॥

मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला। तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला॥

काम बात कफ लोभ अपारा। क्रोध पित्त नित छाती जारा॥
प्रीति करहिं जौं तीनि भा। उपजइ सन्यपात दुखदा॥
बिषय मनोरथ दुर्गम नाना। ते सब सूल नाम को जाना॥
ममता दादु कंडु इरषा। हरष बिषाद गरह बहुता॥
पर सुख देखि जरनि सो छ। कुष्ट दुष्टता मन कुटिल॥
अहंकार अति दुखद डमरुआ। दंभ कपट मद मान नेहरुआ॥
तृस्ना उदरबृद्धि अति भारी। त्रिबिध ईषना तरुन तिजारी॥
जुग बिधि ज्वर मत्सर अबिबेका। कहँ लागि कहौं कुरोग अनेका॥

दो. एक ब्याधि बस नर मरहिं ए असाधि बहु ब्याधि।
पीड़हिं संतत जीव कहुँ सो किमि लहै समाधि॥ १२१क॥

नेम धर्म आचार तप ग्यान जग्य जप दान।
भेषज पुनि कोटिन्ह नहिं रोग जाहिं हरिजान॥ १२१ख॥

एहि बिधि सकल जीव जग रोगी। सोक हरष भय प्रीति बियोगी॥
मानक रोग कछुक मैं गा। हहिं सब कें लखि बिरलेन्ह पा॥
जाने ते छीजहिं कछु पापी। नास न पावहिं जन परितापी॥
बिषय कुपथ्य पा अंकुरे। मुनिहु हृदयँ का नर बापुरे॥

राम कृपाँ नासहि सब रोगा। जौं एहि भाँति बनै संयोगा॥
सदगुर बैद बचन बिस्वासा। संजम यह न बिषय कै आसा॥
रघुपति भगति सजीवन मूरी। अनूपान श्रद्धा मति पूरी॥
एहि बिधि भलेहिं सो रोग नसाहीं। नाहिं त जतन कोटि नहिं जाहीं॥
जानि तब मन बिरुज गोसाँई। जब उर बल बिराग अधिका॥
सुमति छुधा बाढ़इ नित न। बिषय आस दुर्बलता ग॥
बिमल ग्यान जल जब सो नहा। तब रह राम भगति उर छा॥
सिव अज सुक सनकादिक नारद। जे मुनि ब्रह्म बिचार बिसारद॥
सब कर मत खगनायक एहा। करि राम पद पंकज नेहा॥
श्रुति पुरान सब ग्रंथ कहाहीं। रघुपति भगति बिना सुख नाहीं॥
कमठ पीठ जामहिं बरु बारा। बंध्या सुत बरु काहुहि मारा॥
फूलहिं नभ बरु बहुबिधि फूला। जीव न लह सुख हरि प्रतिकूला॥
तृषा जा बरु मृगजल पाना। बरु जामहिं सस सीस बिषाना॥
अंधकारु बरु रबिहि नसावै। राम बिमुख न जीव सुख पावै॥
हिम ते अनल प्रगट बरु हो। बिमुख राम सुख पाव न को॥
दो०बारि मथें घृत हो बरु सिकता ते बरु तेल।

बिनु हरि भजन न भव तरि यह सिद्धांत अपेल॥ १२२क॥

मसकहि करइ बिरंचि प्रभु अजहि मसक ते हीन।
अस बिचारि तजि संसय रामहि भजहिं प्रबीन॥ १२२ख॥

श्लोक- विनिच्श्रितं वदामि ते न अन्यथा वचांसि मे।
हरिं नरा भजन्ति येऽतिदुस्तरं तरन्ति ते॥ १२२ग॥

कहैं नाथ हरि चरित अनूपा। ब्यास समास स्वमति अनुरुपा॥
श्रुति सिद्धांत इहइ उरगारी। राम भजि सब काज बिसारी॥
प्रभु रघुपति तजि से काही। मोहि से सठ पर ममता जाही॥
तुम्ह बिग्यानरूप नहिं मोहा। नाथ कीन्हि मो पर अति छोहा॥
पूछिहुँ राम कथा अति पावनि। सुक सनकादि संभु मन भावनि॥
सत संगति दुर्लभ संसारा। निमिष दंड भरि एकउ बारा॥
देखु गरुड़ निज हृदयँ बिचारी। मैं रघुबीर भजन अधिकारी॥
सकुनाधम सब भाँति अपावन। प्रभु मोहि कीन्ह बिदित जग पावन॥

दो. आजु धन्य मैं धन्य अति जद्यपि सब बिधि हीन।
निज जन जानि राम मोहि संत समागम दीन॥ १२३क॥

नाथ जथामति भाषैं राखैं नहिं कछु गो।

चरित सिंधु रघुनायक थाह कि पावइ को ॥ १२३ ॥

सुमिरि राम के गुन गन नाना । पुनि पुनि हरष भुसुंडि सुजाना ॥
महिमा निगम नेति करि गा । अतुलित बल प्रताप प्रभुता ॥
सिव अज पूज्य चरन रघुरा । मो पर कृपा परम मृदुला ॥
अस सुभा कहुँ सुनउँ न देखउँ । केहि खगेस रघुपति सम लेखउँ ॥
साधक सिद्ध बिमुक्त उदासी । कबि कोबिद कृतग्य संन्यासी ॥
जोगी सूर सुतापस ग्यानी । धर्म निरत पंडित बिग्यानी ॥
तरहिं न बिनु सेँ मम स्वामी । राम नमामि नमामि नमामी ॥
सरन गँ मो से अघ रासी । होहिं सुद्ध नमामि अबिनासी ॥

दो. जासु नाम भव भेषज हरन घोर त्रय सूल ।
सो कृपालु मोहि तो पर सदा रहउ अनुकूल ॥ १२४क ॥

सुनि भुसुंडि के बचन सुभ देखि राम पद नेह ।
बोले प्रेम सहित गिरा गरुड़ बिगत संदेह ॥ १२४ख ॥

मै कृत्कृत्य भयउँ तव बानी । सुनि रघुबीर भगति रस सानी ॥
राम चरन नूतन रति भ । माया जनित बिपति सब ग ॥

मोह जलधि बोहित तुम्ह भ। मो कहँ नाथ बिबिध सुख द ॥
मो पहिं हो न प्रति उपकारा। बंदउँ तव पद बारहिं बारा ॥
पूरन काम राम अनुरागी। तुम्ह सम तात न को बड़भागी ॥
संत बिटप सरिता गिरि धरनी। पर हित हेतु सबन्ह कै करनी ॥
संत हृदय नवनीत समाना। कहा कबिन्ह परि कहै न जाना ॥
निज परिताप द्रवइ नवनीता। पर दुख द्रवहिं संत सुपुनीता ॥
जीवन जन्म सुफल मम भय। तव प्रसाद संसय सब गय ॥
जानेहु सदा मोहि निज किंकर। पुनि पुनि उमा कहइ बिहंगबर ॥

दो. तासु चरन सिरु ना करि प्रेम सहित मतिधीर।
गयउ गरुड़ बैकुंठ तब हृदयँ राखि रघुबीर ॥ १२५क ॥

गिरिजा संत समागम सम न लाभ कछु आन।
बिनु हरि कृपा न हो सो गावहिं बेद पुरान ॥ १२५ख ॥

कहैं परम पुनीत इतिहासा। सुनत श्रवन छूटहिं भव पासा ॥
प्रनत कल्पतरु करुना पुंजा। उपजइ प्रीति राम पद कंजा ॥
मन क्रम बचन जनित अघ जा। सुनहिं जे कथा श्रवन मन ला ॥
तीर्थाटन साधन समुदा। जोग बिराग ग्यान निपुना ॥

नाना कर्म धर्म ब्रत दाना। संजम दम जप तप मख नाना॥
भूत दया द्विज गुर सेवका। बिद्या बिनय बिबेक बड़ा॥
जहँ लगि साधन बेद बखानी। सब कर फल हरि भगति भवानी॥
सो रघुनाथ भगति श्रुति गा। राम कृपाँ काहूँ एक पा॥

दो. मुनि दुर्लभ हरि भगति नर पावहिं बिनहिं प्रयास।
जे यह कथा निरंतर सुनहिं मानि बिस्वास॥ १२६॥

सो सर्बग्य गुनी सो ग्याता। सो महि मंडित पंडित दाता॥
धर्म परायन सो कुल त्राता। राम चरन जा कर मन राता॥
नीति निपुन सो परम सयाना। श्रुति सिद्धांत नीक तेहिं जाना॥
सो कबि कोबिद सो रनधीरा। जो छल छाड़ि भजइ रघुबीरा॥
धन्य देस सो जहँ सुरसरी। धन्य नारि पतिब्रत अनुसरी॥
धन्य सो भूपु नीति जो कर। धन्य सो द्विज निज धर्म न टर॥
सो धन धन्य प्रथम गति जाकी। धन्य पुन्य रत मति सो पाकी॥
धन्य घरी सो जब सतसंगा। धन्य जन्म द्विज भगति अभंगा॥

दो. सो कुल धन्य उमा सुनु जगत पूज्य सुपुनीत।
श्रीरघुबीर परायन जेहिं नर उपज बिनीत॥ १२७॥

मति अनुरूप कथा मैं भाषी। जद्यपि प्रथम गुप्त करि राखी॥
तव मन प्रीति देखि अधिका। तब मैं रघुपति कथा सुना॥
यह न कहि सठही हठसीलहि। जो मन ला न सुन हरि लीलहि॥
कहि न लोभिहि क्रोधहि कामिहि। जो न भजइ सचराचर स्वामिहि॥
द्विज द्रोहिहि न सुना कबहूँ। सुरपति सरिस हो नृप जबहूँ॥
राम कथा के ते अधिकारी। जिन्ह कें सतसंगति अति प्यारी॥
गुर पद प्रीति नीति रत जे। द्विज सेवक अधिकारी ते॥
ता कहँ यह बिसेष सुखदा। जाहि प्रानप्रिय श्रीरघुरा॥

दो. राम चरन रति जो चह अथवा पद निर्बान।
भाव सहित सो यह कथा करउ श्रवन पुट पान॥ १२८॥

राम कथा गिरिजा मैं बरनी। कलि मल समनि मनोमल हरनी॥
संसृति रोग सजीवन मूरी। राम कथा गावहिं श्रुति सूरी॥
एहि महँ रुचिर सप्त सोपाना। रघुपति भगति केर पंथाना॥
अति हरि कृपा जाहि पर हो। पाँ दे एहिं मारग सो॥
मन कामना सिद्धि नर पावा। जे यह कथा कपट तजि गावा॥
कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं। ते गोपद इव भवनिधि तरहीं॥

सुनि सब कथा हृदयँ अति भा। गिरिजा बोली गिरा सुहा॥
नाथ कृपाँ मम गत संदेहा। राम चरन उपजे नव नेहा॥

दो. मैं कृतकृत्य भइँ अब तव प्रसाद बिस्वेस।
उपजी राम भगति दृढ़ बीते सकल कलेस॥ १२९॥

यह सुभ संभु उमा संबादा। सुख संपादन समन बिषादा॥
भव भंजन गंजन संदेहा। जन रंजन सज्जन प्रिय एहा॥
राम उपासक जे जग माहीं। एहि सम प्रिय तिन्ह के कछु नाहीं॥
रघुपति कृपाँ जथामति गावा। मैं यह पावन चरित सुहावा॥
एहिं कलिकाल न साधन दूजा। जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा॥
रामहि सुमिरि गा रामहि। संतत सुनि राम गुन ग्रामहि॥
जासु पतित पावन बड़ बाना। गावहिं कबि श्रुति संत पुराना॥
ताहि भजहि मन तजि कुटिला। राम भजें गति केहिं नहिं पा॥

छं. पा न केहिं गति पतित पावन राम भजि सुनु सठ मना।
गनिका अजामिल ब्याध गीध गजादि खल तारे घना॥
आभीर जमन किरात खस स्वपचादि अति अघरूप जे।
कहि नाम बारक तेपि पावन होहिं राम नमामि ते॥ १॥

रघुबंस भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं।
कलि मल मनोमल धो बिनु श्रम राम धाम सिधावहीं॥
सत पंच चौपां मनोहर जानि जो नर उर धरै।
दारुन अबिद्या पंच जनित बिकार श्रीरघुबर हरै॥ २॥

सुंदर सुजान कृपा निधान अनाथ पर कर प्रीति जो।
सो एक राम अकाम हित निर्बानप्रद सम आन को॥
जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।
पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ॥ ३॥

दो. मो सम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुबीर।
अस बिचारि रघुबंस मनि हरहु बिषम भव भीर॥ १३०क॥

कामिहि नारि पिआरि जिमि लोभहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम॥ १३०ख॥

श्लोक-यत्पूर्व प्रभुणा कृतं सुकविना श्रीशम्भुना दुर्गमं
श्रीमद्रामपदाब्जभक्तिमनिशं प्राप्त्यै तु रामायणम्।

मत्वा तद्रघुनाथमनिरतं स्वान्तस्तमःशान्तये
भाषाबद्धमिदं चकार तुलसीदासस्तथा मानसम्॥ १॥

पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं
मायामोहमलापहं सुविमलं प्रेमाम्बुपूरं शुभम्।
श्रीमद्रामचरित्रमानसमिदं भक्त्यावगाहन्ति ये
ते संसारपतङ्गघोरकिरणैर्दह्यन्ति नो मानवाः॥ २॥

मासपारायण तीसवाँ विश्राम

नवान्हपारायण नवाँ विश्राम

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने
सप्तमः सोपानः समाप्तः।
उत्तरकाण्ड समाप्त